पंजीयन संख्या : 68939/98

ज्ञान तत्व

सत्यता एवं निष्पक्षता का निर्भीक पाक्षिक

AUG 2025
अंक - 15

477

दहेज़ प्रथा 3

हर राजनेता को पारिवारिक और सामाजिक एकता से हमेशा भय बना रहता है, इसलिए हर राजनैतिक दल किसी न किसी रूप में इस एकता को छिन्न-भिन्न करता रहता है। वह चाहता है कि धर्म, जाति की तरह ही महिला और पुरुष का लिंग भेद भी उसकी परिवार-तोड़क, समाज-तोड़क भूमिका में सहायक हो।

अपनों से अपनी बात- 10

संविधान सभा 15

संविधान सभा सिर्फ सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, संवैधानिक सब प्रकार के विषयों पर विचार मंथन तक केंद्रित है। आगे संविधान सभा विचार करेगी कि हमें किस दिशा में सक्रिय होना है।

प्रकाशन की तिथि - 15-08-2025 पोस्ट की तिथि - 31-08-2025

सिंहावलोकन

5 **दहेज प्रथा समीक्षा**

5 **प्रश्नोत्तर**

12 **महिलाओं पर चर्चा** -

14 **गांधीवाद**

भारत में संघ की बढ़ती ताकत

17 **ज़ूम कार्यक्रम का सारांश**

साथियों की कलम से -

18 **लोकतांत्रिक संतुलन और न्यायिक हस्तक्षेप: पानीपत का मामला**

पत्र व्यवहार का पता

बजरंग लाल अग्रवाल पोस्ट बाक्स 15, रायपुर (छ.ग.) 492021

website : margdarshak.info

प्रकाशक, संपादक व स्वामी - बजरंगलाल

9617079344

mail : Support@margdarshak.info

मुख्य कार्यालय-
ज्ञानयज्ञ परिवार आश्रम
रामानुजगंज छत्तीसगढ़ 497220
8318621282, 9630766001

लोक स्वराज अभियान
505 कृष्णा शिप्रा अजूरा अपार्टमेंट कौशांबी
गाजियाबाद 201012
9325683604, 9012432074

प्रधान संपादक
बजरंग लाल अग्रवाल
(बजरंग मुनि)

संपादक मण्डल
नरेन्द्र सिंह
विपिन तिवारी
विपुल आदर्श

सहयोगी संपादक
ज्ञानेन्द्र आर्य

सदस्यता नियमन
संजय गुप्ता 872669477
कुशल दुबे 7999934238

सज्जा
लाल बाबू रवि

वितरण एवं मुद्रण सहयोग
रबीन्द्र विश्वास

दहेज प्रथा

बजरंग मुनि
प्रधान संपादक

भारत 140 करोड़ व्यक्तियों का देश है और उसमें प्रत्येक व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकार समान हैं। इनमें किसी भी प्रकार का महिला या पुरुष या कोई अन्य भेदभाव नहीं किया जा सकता। इसका अर्थ हुआ कि प्रत्येक व्यक्ति के अधिकार समान हैं। फिर भी महिला और पुरुष के बीच कुछ प्राकृतिक और सामाजिक असमानताएं हैं। दोनों की शारीरिक संरचना भिन्न-भिन्न है। सामाजिक संरचना में भी कुछ भिन्नताएँ हैं। अर्थात एक महिला और पुरुष को संतान उत्पत्ति के लिए किसी अन्य परिवार के साथ जुड़ना अनिवार्य है। यह वैज्ञानिक कारण से है या परम्परागत, किन्तु पूरे विश्व में इसकी मान्यता अवश्य है। इसी तरह पति-पत्नी के बीच यह भी आवश्यक है कि पति को सामान्यतया आक्रामक और पत्नी को आकर्षक स्वरूप में रहना चाहिए। इन सब स्थितियों को देखते हुए ही संयुक्त परिवार को समाज की पहली व्यवस्थागत इकाई माना गया। यह व्यवस्था की गई कि परिवार के सदस्य मिलकर यह तय करेंगे कि किस सदस्य को किस प्रकार का कार्य प्रमुखता से करना है। इस कार्य-विभाजन में भी महिला और पुरुष का भेद स्वाभाविक होता है। इस तरह यह व्यवस्था आवश्यक हो जाती है कि महिला और पुरुष में से कोई एक दूसरे के परिवार में जाकर रहे और इस परिवार परिवर्तन में महिलाओं को अधिक महत्व दिया जाता है।

समाज व्यवस्था में स्वतंत्रता के बाद राजनैतिक हस्तक्षेप बढ़ा। हर राजनेता को पारिवारिक और सामाजिक एकता से हमेशा भय बना रहता है, इसलिए हर राजनैतिक दल किसी न किसी रूप में इस एकता को छिन्न-भिन्न करता रहता है। वह चाहता है कि धर्म, जाति की तरह ही महिला और पुरुष का लिंग भेद भी उसकी परिवार-तोड़क, समाज-तोड़क भूमिका में सहायक हो। पारिवारिक संरचना एक बहुत जटिल प्रक्रिया है। किसी एक परिवार का पला-बढ़ा सदस्य परिवार छोड़कर किसी दूसरे परिवार में शामिल होने के लिए मजबूर होता है तो इस परिस्थिति की कल्पना करना भी कठिन होता है किन्तु इसके अलावा कोई मार्ग नहीं होता। इस जटिलता की कमजोरियों का राजनेता लाभ उठाते हैं। महिला और पुरुष के बीच एक-दूसरे के प्रति कुछ स्वाभाविक आकर्षण होता है। इस आधार पर महिला और पुरुष के बीच दूरी घटनी चाहिए या बढ़नी चाहिए, इसका निर्णय उन महिला और पुरुष अथवा उनके परिवार पर छोड़ा जाना चाहिए था, किन्तु हमारे राजनेताओं ने जबरदस्ती इस दूरी घटाने और बढ़ाने में अपना कानूनी पैर फँसाया। सामान्यतया व्यवस्था है कि लड़की और लड़के के परिवार यह अवश्य देखते हैं कि परिवार बदलते समय लड़की की तुलना में लड़के की योग्यता अधिक हो। इसमें भी राजनेता महिला सशक्तिकरण के नाम पर हस्तक्षेप करता है। परिवार में जन्म लिया बालक परिवार, समाज और राष्ट्र के सम्मिलित अधिकार का माना जाता है किन्तु इसमें भी कानून बालक को राष्ट्रीय सम्पत्ति मानने की तिकड़म करता रहता है। मैंने अपने अनुभव से देखा कि सम्पूर्ण भारत में लगभग 99 प्रतिशत लोग दहेज का विरोध करते हैं और लगभग सबके सब अपने लड़के के विवाह में अधिक से अधिक दहेज लेने का प्रयास करते हैं। एक ओर तो ऐसे दहेज-विरोधी लड़की के पिता के प्रति बहुत दया भाव प्रकट करते हैं, दूसरी ओर वही लोग विवाहित लड़की को पिता से सम्पत्ति लेने के लिए मुकदमा लड़ने तक की प्रेरणा देते देखे जाते हैं। कानून तो पूरी तरह ऐसे पिता-पुत्री टकराव का तानाबाना हमेशा बुनता ही रहता है। किन्तु कभी-कभी तो धर्मगुरु तक इस प्रचार में शामिल हो जाते हैं। परिवार का अर्थ सम्पूर्ण समर्पण और सहजीवन होता है। इस सहजीवन में बाहर का हस्तक्षेप विशेष परिस्थिति में ही होना चाहिए, किन्तु हमारे कानून हर मामले में हस्तक्षेप भी करते हैं और यदि दो लोग अलग होना चाहें तो उन्हें अलग होने की स्वतंत्रता में भी बाधा उत्पन्न करते हैं।

मैं भी बचपन में दहेज विरोधी रहा। मेरे लड़के के विवाह के लिए एक परिचित गरीब व्यक्ति ने इच्छा व्यक्त की। मैंने उन्हें एक अन्य बहुत योग्य लड़का सुझाया तो उन्होंने यह कहकर इन्कार कर दिया कि वे तो मेरे ही घर में लड़की देना चाहते हैं। मुझे लगा कि उन्हें लड़का या परिवार की अपेक्षा मेरी जमीन और आर्थिक सम्पन्नता से अधिक मोह है। मैंने इन्कार कर दिया और दहेज-विरोध के प्रति मेरा मोह भंग हो गया। मैंने महसूस किया कि दहेज कोई बुराई न होकर एक सामाजिक व्यवस्था रहा है। विवाह के समय एक लड़की अपने पिता के घर से अपना अनुमानित हिस्सा लेकर जाती है और पति-परिवार अपने लड़के के हिस्से के अनुपात में जेवर के रूप में बहू को देता है। यह जेवर अंत तक उस लड़की की व्यक्तिगत सम्पत्ति मानी जाती है। अपवाद स्वरूप ही माता-पिता इसमें कोई गड़बड़ी करते रहे हैं। मैं नहीं समझता कि इस दहेज प्रथा को क्यों तोड़कर लड़की को पिता की सम्पत्ति में कानूनी अधिकार को मान्यता दी गई। यदि ऐसा करने वाले की नीयत पर संदेह किया जाए तो क्या गलत है? पुराने समय में तो वैसे भी सम्पत्ति का बँटवारा न के बराबर होता था। यह तो कानूनी बँटवारा भारत में अंग्रेजों की देन है, जो न समाज व्यवस्था मानते हैं, न ही परिवार व्यवस्था को। वे तो केवल व्यक्ति को ही समाज की एकमात्र इकाई मानते हैं। वैसे भी भारत में आधी आबादी दहेज से संबंध नहीं रखती। शेष आधी आबादी भी ऐसी है, जो सम्पन्न माने जाते हैं। पता नहीं हमारे नेताओं को इन सम्पन्नों की दहेज प्रथा के बारे में सोचने की ज़रूरत क्यों पड़ी। इन्होंने दहेज के नाम पर व्यवस्था को तोड़ा। जबकि यदि इनमें कोई कमी थी तो उसे सुधारना चाहिए था। मैं सोचता हूँ कि दहेज का विरोध करना बिल्कुल ही अव्यावहारिक है। कोई अच्छी लड़की बिना दहेज के सम्पन्न कमजोर लड़के के साथ

स्वेच्छा से जाती है या कोई सम्पन्न कमजोर लड़की धन देकर किसी गरीब के साथ चली जाती है तो यह उनका आंतरिक मामला है और यदि सहमति है तो इसमें समाज या कानून का हस्तक्षेप क्यों? भारत में जितने प्रतिशत गरीब हैं, उतने ही प्रतिशत गरीब लड़कों की भी संख्या है और गरीब लड़कियों की भी। यदि कोई सामाजिक क्रांति करके या कानून बनाकर बड़े घर के लड़कों के साथ बिना दहेज के गरीब लड़कियों का विवाह कराने की पहल की गई तो मेरे विचार से तो यह प्रयास बहुत ही हानिकारक होगा क्योंकि क्या यह भी प्रयास होगा कि फिर बड़े घर की लड़कियों को गरीब लड़कों के साथ जोड़ने की मुहिम शुरू की जाए। मैं तो सोच भी नहीं सकता कि दहेज का विरोध करने वाले इतनी साधारण-सी बात भी क्यों नहीं समझ पाते। यदि हम वर्तमान स्थिति की समीक्षा करें तो देख रहे हैं कि स्वाभाविक रूप से दहेज पूरी तरह समाप्त हो गया है। विवाह योग्य लड़कियों की संख्या बहुत कम हो गई है। कहीं-कहीं तो लड़के वाले दहेज देने लगे हैं। जाति प्रथा भी टूट रही है। इसके बाद भी कुछ पेशेवर नेता और सामाजिक कार्यकर्ता दहेज को समस्या के रूप में बताते रहते हैं। उनकी आदत हो गई है। एक विचारणीय सिद्धान्त यह भी है कि किसी वर्ग में सभी व्यक्ति अच्छे या बुरे नहीं होते। यदि किसी वर्ग विशेष को विशेष अधिकार दिये जाते हैं तो उस अधिकार प्राप्त वर्ग के धूर्त अपराधी प्रवृत्ति के लोग उस विशेषाधिकार का लाभ उठाते हैं और उस वर्ग से बाहर के शरीफ लोगों का शोषण होता है। दहेज के कानून का कितना दुरुपयोग हुआ यह पूरा देश जानता है। फिर भी पता नहीं क्यों ऐसे-ऐसे धूर्त सशक्तिकरण के विशेषाधिकार कानून बनाये भी जाते हैं और रखे भी जाते हैं।

मैं जानता हूँ कि दहेज के मामले में ऐसी सोच रखने वाला मैं अकेला ही हो सकता हूँ, किन्तु मैं आश्वस्त हूँ कि परिवार के पारिवारिक मामलों में किसी भी प्रकार का कोई कानूनी हस्तक्षेप बहुत घातक होगा। हिन्दू कोड बिल तो पूरा का पूरा समाज व्यवस्था के लिए एक कलंक है ही। यह परिवार को तोड़ता है, समाज को तोड़ता है, और किसी प्रकार का कोई लाभ नहीं देता। फिर भी मैं यह महसूस करता हूँ कि पुरानी व्यवस्था पर न तो अब लौटना संभव है, न ही उचित। इसलिए मैं एक संशोधित व्यवस्था का सुझाव देता हूँ। इसके अनुसार सरकार को पारिवारिक मामलों में सारे कानून हटा लेने चाहिए। साथ ही एक नई व्यवस्था बनानी चाहिए कि परिवार की सम्पत्ति में परिवार के प्रत्येक सदस्य का जन्म से मृत्यु तक समान अधिकार होगा। इसमें उम्र, लिंग आदि का कोई भेद नहीं किया जायेगा। परिवार की आंतरिक व्यवस्था परिवार के लोग बिना बाहरी हस्तक्षेप के आपसी सहमति से स्वतंत्रतापूर्वक कर सकेंगे। यदि परिवार का कोई सदस्य कभी भी परिवार छोड़ना चाहे तो वह अपना हिस्सा लेकर परिवार छोड़ सकता है। मैं यह भी जानता हूँ कि कोई भी राजनेता ऐसे सुझाव को स्वीकार नहीं करेगा क्योंकि इससे तो उसका समाज-तोड़क उद्देश्य ही खत्म हो जायेगा, किन्तु मैं समझता हूँ कि हमें इस विषय पर गंभीरता से विचार करना चाहिए। मैं देखता हूँ कि मेरे कई साथी समाज सेवा के नाम पर दहेज प्रथा के विरोध में कुछ न कुछ करते-बोलते रहते हैं। मेरा उन साथियों से भी निवेदन है कि वे राजनेताओं के दहेज-विरोधी प्रचार से अपने को मुक्त करें और महसूस करें कि दहेज कोई सामाजिक समस्या या अन्याय-अत्याचार नहीं बल्कि एक सामाजिक व्यवस्था है, जो आपसी सहमति से चलती है।

दहेज प्रथा समीक्षा

1- दहेज नहीं लेना एक आदर्श स्थिति है और बहुत ही अच्छी बात है। इस प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करना चाहिए और ऐसे परिवार की प्रशंसा होनी चाहिए। यदि स्वैच्छिक दहेज का लेन-देन होता है तो वह भी इसी श्रेणी में माना जाना चाहिए। सौदेबाजी करके दहेज का लेन-देन करना न तो अच्छी बात है, न ही आदर्श। किंतु यह बात न ही कोई बुराई है, न ही अपराध। इसे एक व्यवहारिक दृष्टिकोण कह सकते हैं, जो न सामाजिक कार्य है, न ही आपराधिक। ऐसा कार्य असामाजिक कहा जा सकता है जिसके लिए न प्रशंसा उचित है न ही आलोचना।

2- विवाह के बाद किसी भी प्रकार से दहेज के लिए दबाव डालना या प्रताड़ित करना समाज-विरोधी कार्य माना जाना चाहिए। ऐसे कार्य को निरुत्साहित भी करना चाहिए तथा आलोचना भी होनी चाहिए। किंतु यदि ऐसा कार्य किसी के प्राकृतिक अधिकारों का उल्लंघन करता है तो ऐसे कार्य के लिए उक्त अपराधी को दंडित भी करना चाहिए। जब तक कोई अपराध न हो तब तक दहेज को निरुत्साहित ही कर सकते हैं, दंडित नहीं। अपराध गलत है, चाहे दहेज के नाम पर हो या किसी अन्य नाम पर। इसका अर्थ हुआ कि दहेज अथवा किसी अन्य पारिवारिक मामले में कानून का हस्तक्षेप शून्यवत होना चाहिए। ऐसा कार्य परिवार या समाज पर छोड़ देना चाहिए। पारिवारिक, सामाजिक व्यवस्था में यदि कोई बुराई प्रवेश करती है तो उसे रोकना सरकार का काम नहीं। ऐसे सभी कानून समाप्त हो जाने चाहिए।

3- महिला और पुरुष की तुलना आग और बारूद से होती है। दूरी घटना, विध्वंस का कारण बन सकता है और दूरी बढ़ना सृजन में बाधा पैदा करेगा। दूरी घटने या बढ़ने का निर्णय व्यक्तिगत अथवा पारिवारिक हो सकता है। विशेष परिस्थितियों में समाज भी ऐसे निर्णय को अनुशासित कर सकता है, किंतु सरकार को इस संबंध में तब तक कोई कानून नहीं बनाना चाहिए जब तक कोई अपराध न हो।

प्रश्नोत्तर

प्रश्न-1 रैपिड सनसनी मासिक में छपे समाचार के अनुसार दहेज संबंधी धारा चार सौ अट्ठानवे ए के परिणामस्वरूप देश को करीब पैंतालीस सौ करोड़ रुपये का प्रति वर्ष नुकसान होता है। ये आंकड़े सेव इंडियन फैमिली फाउंडेशन की रिपोर्ट के आधार पर लिखे जा रहे हैं। कर्नाटक लॉ कमीशन के जस्टिस वी. सी. मलिमथ के निर्देश पर उक्त जानकारी फाउंडेशन ने जुटाई है फाउंडेशन की रिपोर्ट के अनुसार उक्त धारा का सादुपयोग कम और दुरुपयोग बहुत आधिक हो रहा है। अनेक परिवार झूठे मुकदमों में फंसाकर जेल में रख दिए गए हैं। पति-पत्नी के बीच विवाद में उक्त धारा का झूठा उपयोग करना तो आम बात है। इस सर्वेक्षण में सलाह दी गई है कि सरकार ऐसे कानून में संशोधन करने की सोचे। आपकी क्या राय है?

उत्तर- किसी भी वर्ग को कोई भी विशेषाधिकार देना हमेशा ही घातक होता है क्योंकि चरित्र का अधिकांश हिस्सा व्यक्तिगत ही होता है। सामूहिक भाग बहुत कम होता है। यदि हम किसी वर्ग के चरित्र को सामूहिक मानते हैं तो दुरुपयोग होना निश्चित है क्योंकि उक्त वर्ग में शरीफ और धूर्त दोनों प्रकार के लोगों का समावेश है। उक्त विशेषाधिकार का जितना लाभ शरीफ उठाएंगे उससे कई गुना अधिक लाभ धूर्त उठाकर समाज के समक्ष समस्याएं पैदा करेंगे। मैं तो बहुत पुराने समय से इस धारा के दुरुपयोग के अनेक प्रकरण प्रत्यक्ष देख चुका हूं। मैं तो महिला उत्पीड़न के साथ-साथ आदिवासी, हरिजन उत्पीड़न जैसे विशेषाधिकारों का दुरुपयोग देखता रहा हूं। विवाह का वचन देकर दैहिक शोषण को बलात्कार कहने वाले नियमों को भी मैं बिल्कुल ही गलत मानता हूं। इसमें धोखा का मुकदमा तो संभव है, किंतु बलात्कार कहाँ से आ जाता है यह पता नहीं। मेरी यह बिल्कुल सलाह है कि महिलाओं को पूरी तरह समान अधिकार दे दिया जाए और विशेष अधिकार वापस ले लिए जाएं। मैंने अब तक उक्त रिपोर्ट न देखी है, न सुनी है। कभी देखने का अवसर मिला तब व्यापक चर्चा करूंगा।

प्रश्न 2- आपने दहेज प्रथा का एकपक्षीय विरोध किया है जबकि मैं देखता हूं कि अनेक परिवारों में विवाह के बाद भी दहेज के लिए दबाव डाला जाता है और कभी-कभी तो हत्या या आत्महत्या भी हो जाती है। विवाह के पूर्व भी लड़का पक्ष इस तरह का मोलभाव करता है जैसे कि लड़की कोई वस्तु हो या गाय हो। इस संबंध में आपने क्यों नहीं सोचा?

उत्तर- सभी वर्गों में सब प्रकार के लोग पाए जाते हैं। किसी एक वर्ग में अच्छे या बुरे लोगों की संख्या अधिक नहीं होती। इसका अर्थ है कि जितनी संख्या में अच्छे-बुरे पुरुष होते हैं उतनी ही संख्या में महिलाओं में भी अच्छे-बुरे होते हैं। अनेक परिवारों में यदि पति या सास-ससुर से बहू परेशान रहती है तो लगभग उतने ही परिवारों में बहू भी ब्लैकमेल करती देखी जाती है। फिर भी लड़की अधिक आत्महत्या करती है क्योंकि उसे परिवार छोड़ने

की कानूनी या सामाजिक स्वतंत्रता नहीं। भारत में एक गलत अवधारणा प्रचलित है कि परिवार एक प्राकृतिक इकाई है जबकि वास्तविकता यह है कि परिवार एक संगठनात्मक इकाई है जो आपसी अनुशासन और सहमति के आधार पर चलता है, कानून के आधार पर नहीं। परिवार के किसी भी सदस्य को कभी भी परिवार से हटने या हटाने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। आप देखेंगे कि भविष्य में न तो कोई लड़की ब्लैकमेल होगी और न ही किसी को कर सकेगी। दहेज के संबंध में बने कानूनों ने अनेक परिवारों में बहुओं को ब्लैकमेल करने का जो अधिकार दिया है उसके दुष्परिणाम निरंतर दिख रहे हैं। मेरा स्पष्ट मत है कि अब परंपरागत परिवार व्यवस्था की जगह लोकतांत्रिक परिवार व्यवस्था को प्रोत्साहित करना चाहिए और परिवार के मामले में सरकार के कानूनी हस्तक्षेप को समाप्त कर देना चाहिए। महिला सशक्तिकरण एक घातक प्रचार है। शराफत सशक्तिकरण, परिवार सशक्तिकरण या समाज सशक्तिकरण का नारा दिया जा सकता है। मैंने राजघाट, दिल्ली में भारत सरकार द्वारा प्रदर्शित एक बोर्ड पढ़ा, जिसमें लिखा हुआ था कि महिलाओं पर अत्याचार कानूनन अपराध है। विचार करिए कि क्या भारत में अन्य किसी पर अत्याचार अपराध नहीं हैं? हर अत्याचार अपराध होता है, सिर्फ महिलाओं पर नहीं। इस बात पर विचार किया जाना चाहिए।

प्रश्न 3- आपने लिखा है कि दहेज समाप्त हो गया है किंतु मेरे विचार में यह बात पूरी तरह गलत है। आज भी बिना दहेज के शादियां हो ही नहीं पा रही हैं। आप भारत के किस क्षेत्र की बात कर रहे हैं जहाँ दहेज खत्म हो गया हो?

उत्तर- संपूर्ण भारत में ग्रामीण और गरीब परिवारों के लड़के बड़ी मात्रा में अविवाहित हैं। अनेक तो 30-35 वर्ष की उम्र पार कर चुके हैं किंतु कोई शादी के लिए आ ही नहीं रहा। अनेक उच्च जाति के लड़के निम्न जाति तक में विवाह करने के लिए तैयार हैं और वह भी बिना किसी दहेज के। मैं मानता हूं कि अधिकांश शादियों में अब भी दहेज का लेन-देन प्रचलित है क्योंकि गरीब और ग्रामीण की लड़कियां संपन्न और शहरी वातावरण में जा रही हैं तो उन्हें तो दहेज देना ही पड़ेगा। आप बासमती चावल खाना चाहते हैं तो महंगाई का रोना क्यों? मैं तो प्रत्यक्ष देख रहा हूं कि सामान्यतया लड़की के माता-पिता को औसत परिवार का लड़का पसंद ही नहीं आ रहा। यह स्थिति किसी एक क्षेत्र की नहीं है बल्कि संपूर्ण भारत की है। आप किसी एक मोहल्ले के 21 परिवारों के 18 वर्ष से अधिक की लड़कियों और लड़कों की गिनती करके देखिए जो अविवाहित हों। मैं आश्वस्त हूं कि 40 और 60 का अनुपात मिलेगा। स्पष्ट है कि मेरी बात सही होगी।

प्रश्न 4. डा. पुरुषोत्तम मीणा, विस्फोट डॉटकॉम से हमारी बहन-बेटियों को दहेज उत्पीड़न के सामाजिक अभिशाप से कानूनी तरीके से बचाने और दहेज उत्पीड़कों को कठोर सजा दिलाने के मकसद से संसद द्वारा संबंधित कानूनी प्रावधानों में संशोधनों के साथ भारतीय दंड संहिता में धारा 498-ए जोड़ी गई थी। मगर किसी भी इकतरफा कठोर कानून की भांति इस कानून का भी प्रारंभ से ही दुरुपयोग शुरू हो गया। जिसको लेकर कानूनविदों में लगातार विवाद रहा है और इस धारा को समाप्त या संशोधित करने की लगातार मांग की जाती रही है। इस धारा के दुरुपयोग के संबंध में समय-समय पर अनेक प्रकार की गंभीर टिप्पणियां और विचार सामने आते रहे हैं। जिनमें से कुछ यहाँ प्रस्तुत हैं

1. 19 जुलाई, 2005 को सुप्रीम कोर्ट ने भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए को कानूनी आतंकवाद की संज्ञा दी।
2. 11 जून, 2010 सुप्रीम कोर्ट ने भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के संबंध में कहा कि पतियों को अपनी स्वतंत्रता को भूल जाना चाहिए।
3. 14 अगस्त, 2010 सुप्रीम कोर्ट ने भारत सरकार से भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए में संशोधन करने के लिए कहा।
4. 04 फरवरी, 2010 पंजाब के अंबाला कोर्ट ने स्वीकारा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के प्रावधानों का दुरुपयोग हो रहा है।
5. 16 अप्रैल, 2010 बॉम्बे हाई कोर्ट ने और 22 अगस्त, 2010 को बैंगलौर हाई कोर्ट ने भी भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के दुरुपयोग की बात को स्वीकारा।
6. 22 अगस्त, 2010 को केंद्रीय सरकार ने सभी प्रदेश सरकारों की पुलिस को भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के प्रावधानों के दुरुपयोग के बारे में चेतावनी दी।
7. विधि आयोग ने अपनी 154वीं रिपोर्ट में इस बात को साफ शब्दों में स्वीकारा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के प्रावधानों का दुरुपयोग हो रहा है।
8. नवंबर, 2012 में सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश द्वय टी.एस. ठाकुर और ज्ञानसुधा मिश्रा की बेंच ने कहा कि धारा 498-ए के आरोप में केवल एफआईआर में नाम लिखवा देने मात्र के आधार पर ही पति-पक्ष के लोगों के विरुद्ध धारा 498-ए के तहत मुकदमा नहीं चलाया जाना चाहिए।

उपरोक्त गंभीर विचारों के होते हुए भी धारा 498-ए भारतीय दंड संहिता में कायम है तथा इसका दुरुपयोग भी लगातार जारी रहा है। जिसको लेकर देश की सर्वोच्च अदालत अर्थात् सुप्रीम कोर्ट ने बुधवार, 02 जुलाई 2014 को एक बार फिर से अनेक गंभीर मानी जा रही टिप्पणियों के साथ अपना निर्णय सुनाया है। न्यायमूर्ति चंद्रमौलि कुमार प्रसाद की अध्यक्षता वाली सुप्रीम कोर्ट की खंडपीठ ने अपने निर्णय में मूल रूप से निम्न बातें कही हैं

1. दहेज उत्पीड़न विरोधी धारा 498-ए का पत्नियों द्वारा जमकर दुरुपयोग किया जा रहा है।
2. धारा 498-ए में वर्णित अपराध के संज्ञेय और गैर-जमानती होने के कारण असंतुष्ट पत्नियां इसे अपने कवच की बजाय अपने पतियों के विरुद्ध हथियार के रूप में इस्तेमाल करती हैं।
3. धारा 498-ए के तहत गिरफ्तार व्यक्ति की स्वतंत्रता को बाधित करने के साथ-साथ, गिरफ्तार व्यक्ति को अपमानित भी करती है और हमेशा के लिए उस पर धब्बा लगाती है।
4. धारा 498-ए वर पक्ष के लोगों को परेशान करने का सबसे आसान तरीका है। पति और उसके रिश्तेदारों को इस प्रावधान के तहत गिरफ्तार कराना बहुत आसान है। अनेक

मामलों में पति के अशक्त दादा-दादी, विदेश में दशकों से रहने वाली उनकी बहनों तक को भी गिरफ्तार किया गया है।

5. धारा 498-ए के इस प्रावधान के तहत गिरफ्तार व्यक्तियों में से करीब एक चौथाई पतियों की मां और बहन जैसी महिलाएं होती हैं, जिन्हें गिरफ्तारी के जाल में लिया जाता है।

6. धारा 498-ए के मामलों में आरोप पत्र दाखिल करने की दर 93.6 फीसदी तक है, जबकि सजा दिलाने की दर सिर्फ 15 फीसदी है।

7. हाल के दिनों में वैवाहिक विवादों में इजाफा हुआ है, जिससे शादी जैसी संस्था प्रभावित हो रही है।

उपरोक्त कारणों से सुप्रीम कोर्ट की खंडपीठ ने कहा कि धारा 498-ए के दुरुपयोग को रोकने के लिये हम सभी राज्य सरकारों को निम्न निर्देश देते हैं 1. देश में पुलिस अभी तक ब्रिटानी सोच से बाहर नहीं निकली है और गिरफ्तार करने का अधिकार बेहद आकर्षक है। पहले गिरफ्तारी और फिर बाकी कार्रवाई करने का रवैया निंदनीय है, जिस पर अंकुश लगाना चाहिए। पुलिस अधिकारी के पास तुरंत गिरफ्तारी की शक्ति, भ्रष्टाचार का बड़ा स्रोत है।

2. सुप्रीम कोर्ट ने अपने निर्णय में आगे निर्देश देते हुए कहा है कि सभी राज्य सरकारें अपने-अपने पुलिस अधिकारियों को हिदायत दें कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498-ए के तहत मामला दर्ज होने पर स्वतः ही गिरफ्तारी नहीं करें, बल्कि पहले दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 41 में प्रदत्त मापदंडों के तहत गिरफ्तारी की आवश्यकता के बारे में खुद को संतुष्ट करें।

3. पुलिस स्वतः ही आरोपी को गिरफ्तार नहीं कर सकती और उसे गिरफ्तार करने की वजह बतानी होगी और ऐसी वजहों की न्यायिक समीक्षा की जाएगी। पुलिस अधिकारी को गिरफ्तार करने की जरूरत के बारे में मजिस्ट्रेट के समक्ष कारण और सामग्री पेश करनी होगी, क्योंकि पतियों को गिरफ्तार करने का कानूनी अधिकार एक बात है और इसके इस्तेमाल को पुलिस द्वारा न्यायोचित ठहराना दूसरी बात है। गिरफ्तार करने के अधिकार के साथ ही पुलिस अधिकारी द्वारा ऐसा करने को कारणों के साथ न्यायोचित ठहराने योग्य होना चाहिए।

4. जिन मामलों में 7 साल तक की सजा हो सकती है, उनमें गिरफ्तारी सिर्फ इस कयास के आधार पर नहीं की जा सकती कि आरोपी ने वह अपराध किया होगा। गिरफ्तारी तभी की जाए, जब इस बात के पर्याप्त सबूत हों कि आरोपी के आज़ाद रहने से मामले की जांच प्रभावित हो सकती है, वह कोई और क्राइम कर सकता है या फरार हो सकता है। ये तो हुई बात सुप्रीम कोर्ट के ताज़ा निर्णय की उक्त टिप्पणियों तथा निर्देशों की, लेकिन जमीनी हकीकत इतनी भयावह है कि धारा 498-ए के कहर से निर्दोष पीड़ितों को मुक्ति दिलाने के लिये इससे भी कहीं आगे बढ़कर किसी भी संवैधानिक संस्था को विचार कर निर्णय करना होगा, क्योंकि फौरी उपचारों से इस क्रूर व्यवस्था से निर्दोष पतियों को न्याय नहीं मिल सकता है। अतः इसके बारे में कुछ व्यवहारिक और कानूनी मुद्दे विचारार्थ प्रस्तुत हैं

1. पति-पत्नी के बीच किसी सामान्य या असामान्य विवाद के कारण यदि पत्नी की ओर से भावावेश में या अपने पीहर के लोगों के दबाव में धारा 498-ए के तहत एक बार पति के खिलाफ मुकदमा दर्ज करवा देने के बाद इसमें समझौता करने का कानूनी प्रावधान नहीं है! ऐसे हालातों में इस कानूनी व्यवस्था के तहत एक बार मुकदमा अर्थात् एफआईआर दर्ज करवाने के बाद वर पक्ष को मुकदमे का सामना करने के अलावा, समाधान का अन्य कोई रास्ता ही नहीं बचता है। इसलिए यदि हम वास्तव में ही विवाह और परिवार नाम की सामाजिक संस्थाओं को बचाने के प्रति गंभीर हैं तो हमें इस मामले में मुकदमे को वापस लेने या किसी भी स्तर पर समझौता करने का कानूनी प्रावधान करना होगा। अन्यथा वर्तमान हालातों में मुकदमा सिद्ध नहीं होने पर, मुकदमा दायर करने वाली पत्नी के विरुद्ध झूठा मुकदमा दायर करने के अपराध में स्वतः आपराधिक मुकदमा दर्ज करने की कानूनी व्यवस्था किया जाना प्राकृतिक न्याय की मांग है, क्योंकि स्वयं सुप्रीम कोर्ट का कहना है कि 85 फीसदी मामलों में धारा 498-ए के आरोप सिद्ध ही नहीं हो पाते हैं। इस स्थिति से कैसे निपटा जाए और झूठे आरोप लगाने वाली पत्नियों के साथ क्या सलूक किया जाना चाहिए इस बारे में सुप्रीम कोर्ट का निर्णय पूरी तरह से मौन हैकृजो दुखद है। धारा 498-ए के मामले में साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान न्यायशास्त्र के उस मौलिक सिद्धांत का सरेआम उल्लंघन करते हैं जिसके अनुसार आरोप लगाने के बाद आरोपों को सही सिद्ध करने का दायित्व अभियोजन या वादी पक्ष पर नहीं डालकर आरोपी पर डालता है कि वह अपने आपको निर्दोष सिद्ध करे। जिसके चलते पुलिस को इस बात से कोई लेना-देना नहीं रहता कि कोर्ट से यदि कोई आरोपी छूट भी जाता है तो इसके बारे में उससे कोई सवाल-जवाब किए जाने की समस्या होगी। संसारभर में मान्यताप्राप्त न्यायशास्त्र के इस सिद्धांत को धारा 498-ए के मामले में भी लागू किया जाना चाहिए कि आरोप लगाने वाली पत्नियां इस बात के लिए जिम्मेदार हों कि उनकी ओर से लगाए गए आरोप पुख्ता तथा सही हैं और मनगढ़ंत नहीं हैं, जिन्हें न्यायालय के समक्ष कानूनी प्रक्रिया के तहत सिद्ध करना उनका कानूनी दायित्व है। जब तक इस प्रावधान को नहीं बदला जाता है, तब तक गिरफ्तारी को पारदर्शी बनाने की औपचारिकता मात्र से कुछ भी नहीं होने वाला है।

2. अनेक बार तो खुद पुलिस एफआईआर को फड़वाकर, अपनी सलाह पर पत्नी पक्ष के लोगों से ऐसी एफआईआर लिखवाती है, जिसमें पति-पक्ष के सभी छोटे-बड़े लोगों के नाम लिखे जाते हैं-जिनमें पति, सास, सास की सास, ननद-ननदोई, श्वसुर, श्वसुर के पिता, जेठ-जेठानियां, देवर-देवरानियां, जेठ-जेठानियों और देवर-देवरानियां के पुत्र-पुत्रियों तक के नाम लिखवाए जाते हैं। अनेक मामलों में तो भानजे-भानजियों तक के नाम घसीटे जाते हैं। इस प्रकार हमें इस बात को ध्यान में रखना होगा कि न मात्र धारा 498-ए के मामलों में बल्कि जिन किन्हीं भी मामलों या प्रावधानों में कानून का दुरुपयोग हो रहा है, वहाँ पर किसी प्रभावी संवैधानिक संस्था को लगातार सतर्क और विवेकपूर्ण निगरानी रखनी चाहिए, जिससे कि ऐसे मामलों में धारा 498-ए जैसी स्थिति निर्मित ही नहीं होने पाए। क्योंकि आज धारा 498-ए के मामले में सुप्रीम कोर्ट के अनेक निर्णयों के बाद भी इस समस्या का स्थायी समाधान नहीं दिख रहा है, बल्कि कुछ लोगों का तो यहाँ तक कहना है कि सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के कारण दहेज उत्पीड़कों के हौसले बढ़ेंगे, जिससे पत्नियों पर

अत्याचार बढ़ सकते हैं। फिर भी जब तक इस कानून में से आरोपी के ऊपर स्वयं अपने आपको निर्दोष सिद्ध करने का भार है, तब तक पति-पक्ष के निर्दोष लोगों के ऊपर होने वाले अन्याय को रोक पाना या उन्हें न्याय प्रदान करना वर्तमान व्यवस्था में असंभव है, क्योंकि धारा 498-ए के मामले में साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान न्याय का गला घोंटने वाले, अप्राकृतिक और अन्यायपूर्ण हैं! अतः धारा 498-ए के कहर से निर्दोष पतियों को बचाने में सुप्रीम कोर्ट का वर्तमान निर्णय भी बेअसर ही सिद्ध होना है!

उत्तर- आपका लेख बहुत लंबा था जिसे हम लोगों ने संक्षिप्त लिया है। सुप्रीम कोर्ट ने दो हजार पाँच से यह बात उठाई है। मैं तो प्रारंभ से ही इस धारा का विरोधी हूं। दहेज-विरोधी धारा मूलतः गलती थी, है, और तब तक गलत रहेगी जब तक उसका अस्तित्व है। इस धारा को शामिल करने का वास्तविक उद्देश्य परिवार व्यवस्था कमजोर करके परिवार में वर्ग-विद्वेष फैलाना था। राजनेता ऐसी धाराओं को शामिल करके अपने उद्देश्य में सफल रहे हैं। यह निर्णय आने के तत्काल बाद सरकारों द्वारा पालित-पोषित तथा व्यवसायी महिलाओं को हाय-तौबा मचाते भी टीवी पर देखा होगा। सच बात यह है कि ऐसी महिलाएं कुल महिला आबादी की एक प्रतिशत से भी कम होती हैं, किंतु टीवी में या सरकार के समक्ष ऐसा बोलती हैं जैसे वे संपूर्ण महिला वर्ग का प्रतिनिधित्व करती हैं। राजनीति में भी ऐसी महिलाओं की बात को बहुत महत्व दिया जाता है। यदि गंभीरता से विचार करें तो दहेज प्रथा न कोई सामाजिक बुराई थी, न है। प्राचीन समय में दहेज एक सामाजिक व्यवस्था थी। सामाजिक व्यवस्था में कानून कभी हस्तक्षेप नहीं करता और न करना चाहिए। प्राचीन काल में संपत्ति व्यक्तिगत न होकर पारिवारिक थी। परिवार का मुखिया संपत्ति का मालिक था। विवाह होते समय वह परिवार अपनी संपूर्ण संपत्ति में से लड़के का हिस्सा मानकर जेवर के रूप में देता था जो वधू की व्यक्तिगत संपत्ति मानी जाती थी। कन्या का पिता अपनी संपत्ति में से लड़की का हिस्सा समझकर वर परिवार को दहेज के रूप में देता था। बाद में जब संपत्ति में लड़के के कानूनी अधिकार बने तथा उसके बाद जब लड़की के भी कानूनी अधिकार बने तब नई व्यवस्था और पुरानी व्यवस्था में तालमेल टूटा। तब सामाजिक व्यवस्था और कानूनी व्यवस्था के बीच पूरी तरह अव्यवस्था हो गई। ऐसी ही अव्यवस्था के बीच धीरे-धीरे महिलाओं की संख्या घटती चली गई और विवाह योग्य लड़कों तथा लड़कियों के बीच करीब सौदृसाठ का अनुपात हो गया। लड़के कुंवारे रहने लगे। बड़े-बड़े संपन्न परिवार या तो गरीब घरों की लड़कियां लाने लगे अथवा पैसा देकर लड़की लाने लगे। दहेज तो पूरी तरह समाप्त हुआ ही; इसके विपरीत कहीं-कहीं दहेज मिलने भी लगा। लड़की के परिवार समान स्तर के परिवारों में लड़की देने की अपेक्षा बड़े-बड़े शहरों में बहुत संपन्न परिवारों में लड़की देने की कोशिश करने लगे तथा इस प्रयत्न के लिए स्वेच्छा से खर्च करने लगे। अब तो हालात यह है कि कोई भी लड़की वाला समान परिवार में बिना खर्च के भी शादी करने को सहमत नहीं। विवाह न होने के कारण जाति व्यवस्था टूटने लगी। पुराने जमाने की अनुलोम विवाह प्रथा फिर से शुरू हो रही है। लड़कों की उम्र में बड़े होने के कारण प्रेम विवाह बढ़ रहे हैं। दहेज हत्या या दहेज उत्पीड़न का तो कोई प्रश्न ही नहीं है। विधवा विवाह खुलेआम हो रहे हैं। यदि इसी तरह कुछ वर्षों तक लड़कियों की संख्या घटती रही तो बहुपति की प्रथा भी शुरू होना संभव है।

दहेज संबंधी कानून के जिस दुरुपयोग की चिंता सर्वोच्च न्यायालय ने 2005 से शुरू की, उसका अनुभव मैंने बहुत पहले ही कर लिया था। मैंने कई बार इस कानून के खिलाफ लिखा भी और कहा भी। सच बात तो यह है कि यह पूरा का पूरा कानून ही खत्म करने लायक है। किंतु न्यायपालिका सब कुछ समझते हुए भी अपनी सीमाओं का ज्यादा अतिक्रमण नहीं कर सकती। अभी भी न्यायपालिका ने बहुत संकोच के साथ एक मामूली सा संदेश दिया है। किंतु विधायिका अपने राजनीतिक स्वार्थ में इतना साफ संदेश भी नहीं सुनना चाहती, क्योंकि उसे पता है कि मुट्ठी भर पेशेवर औरतें कभी नहीं चाहतीं कि उनके हाथ का यह कानूनी हथियार निकल जाए। ये मुट्ठी भर पेशेवर औरतें नेताओं को वोट दिलाने का दम भरती हैं। अनेक राजनीतिक महिलाएं भी न्याय और व्यवस्था को किनारे करके ऐसी महिलाओं का समर्थन करना शुरू कर देती हैं। मेरे विचार में किसी कानून का दुरुपयोग रोकना न्यायालय का काम नहीं है। किंतु जब विधायिका बिल्कुल ही अपनी जिम्मेदारी छोड़ दे तो न्यायालय को मजबूरी में ऐसा करना पड़ता है। मैं स्पष्ट देख रहा हूं कि दहेज-विरोधी कानून के दुरुपयोग की पोल खुलने में तो कई दशक लग गए, किंतु बलात्कार संबंधी अभी बना कानून तो दस वर्षों में ही कहर ढाने लग गया है। वैसे तो अभी ही दिखने लगा है कि इस कानून की आड़ में बलात्कार संबंधी सच्ची और झूठी घटनाएं होती थीं, उनमें एकाएक कई गुना बाढ़ जाना चिंताजनक है। इस कथन में कोई दम नहीं कि दो वर्ष पूर्व बलात्कार आज की अपेक्षा ज्यादा होते थे और रिपोर्ट कम। अब बलात्कार तो कम हुए हैं और रिपोर्ट ज्यादा। सच्चाई चाहे जो हो, किंतु मुट्ठीभर महिलाओं के प्रभाव में आकर नेताओं ने बलात्कार कानून का जैसा दुरुपयोग किया वह समाज को बहुत नुकसान करेगा। अच्छा हो कि समय रहते इसमें सुधार कर लिया जाए।

प्रश्न 5. हिन्दू, नारी को देवी के रूप में पूजने के दावे करता है और अपनी ही बहुओं को दहेज कम लाने की वजह से कम खाना, अत्याचार और कत्ल भी करता है।

उत्तररू महिलाओं के विषय में हिन्दू धर्म ग्रंथों में विभिन्न मान्यताएं प्रचलित हैं। जब समाज में महिलाओं को समान अधिकार से वंचित करके दूसरे दर्जे का सदस्य माना जाने लगा, तब "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते" जैसा सम्मानजनक विचार फैलाना आवश्यक हो गया। दूसरी ओर जब महिलाएं समाज में अधिक सशक्त होने लगीं, तब संभव है कि "ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी" का विचार फैला हो। ये दोनों ही विचार परिस्थितिजन्य हैं, सर्वकालिक नहीं। व्यक्ति का आचरण किसी वर्ग के साथ जोड़कर देखना गलत परंपरा है। जब नारी एक माँ होती है तब वह पूज्य होती है, और जब बेटी होती है तब वह संरक्षिता होती है, अमानत होती है, और जब पत्नी होती है तब सहभागी। मैं स्पष्ट कर दूं कि पत्नी कभी सहयोगी नहीं होती, बल्कि सहभागी होती है। उसे सहयोगी कहना गलत है। समाज में प्राचीन समय में भी जहाँ सीता, कुंती जैसी आदर्श महिलाएं हुई हैं तो दूसरी ओर कैकेयी और शूर्पणखा जैसी महिलाओं के भी स्पष्ट उदाहरण मौजूद हैं। किसे देवी माना जाए और किसे दंड का अधिकारी माना जाए यह उनके आचरण से ही निर्धारित हो सकता है, जन्म से नहीं। आपने दहेज के दुष्प्रभाव की बात की जो अधिकांश सुनी-सुनाई बातें हैं। सच्चाई यह है कि अनेक लड़के, लड़कियों के अभाव में कुंवारे रह गए। अब तो न्यायालय भी मानने लगा है कि दहेज के नाम का दुरुपयोग करके लड़कियां ससुराल पक्ष पर बहुत अत्याचार कर रही हैं।

छ.ग. में तो बहुत से बाहर के लोग बहुत पैसा दे-दे कर लड़कियों से विवाह कर रहे हैं और अधिकांश ऐसी लड़कियां सुखी हैं। न सभी पुरुष गलत होते हैं, न सभी महिलाएं। जहाँ आप दहेज की बात कर रहे हैं वहाँ पीड़ित और पीड़क दोनों ही परिवारों में न सिर्फ पुरुष होते हैं, न सिर्फ महिलाएं। यह दहेज का हल्ला बिल्कुल गलत है।

प्रश्नः - 6 दीप आहुजा, कांकेर, छत्तीसगढ़ दहेज प्रथा, बाल विवाह, कन्या भ्रूण हत्या आदि विषयों पर ज्ञानतत्व में आपके तर्कों को अपना बनाकर फेसबुक पर पोस्ट किया। मुझे पता था कि ये तर्क किसी को नहीं पचने वाले हैं क्योंकि ये लीक से हटकर हैं। कोई न कोई इनका विरोध करेगा। ऐसा हुआ भी। असहमत व्यक्ति को मैंने समझाया कि राज्य अनावश्यक ही इन अस्तित्वहीन समस्याओं के समाधान में अपनी शक्ति जाया कर रहा है। मैंने उनको समझाया कि समाज में महिला-पुरुष का एक प्राकृतिक अनुपात होता है। अनुपात बिगड़ने से किसी एक पक्ष का महत्व, सम्मान घटता-बढ़ता रहता है। कन्या भ्रूण हत्या को लेकर मैंने उन्हें बताया कि ये समस्या नहीं बल्कि समाधान है। महिलाओं की संख्या कम होने से उनका सम्मान बढ़ेगा, और तमाम तर्क जो मैं समझ पाया हूँ उनको समझाया। फिर भी वे असहमत रहे। वे सहमत हों यह जरूरी नहीं है पर उनका एक प्रश्न है जिसका उत्तर मैं भी जानना चाहता हूँ कि वैधानिक व्यवस्थाओं में समाज अथवा मानव का अहित कैसे हो सकता है? पुरुष का पशुत्व अथवा कमजोर का शोषण आपको समस्याओं का समाधान कैसे लग सकता है। उत्तर दें?

उत्तरः - प्राकृतिक व्यवस्था को सशक्त करना हम सबका कर्तव्य है चाहे हम व्यक्ति हों या सरकार हों या समाज। प्राकृतिक व्यवस्था में अनावश्यक हस्तक्षेप भी घातक होता है। व्यवस्था को सशक्त करना अलग बात है और कमजोर करना अलग बात। स्त्री-पुरुष का अनुपात जब किसी एक पक्ष में झुकता है और असंतुलन बढ़ जाता है तब प्रकृति स्वयं उसका समाधान करती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि यह समाधान प्राकृतिक तरीके से होता है, बल्कि इसका समाधान माँग और पूर्ति के आधार पर स्वाभाविक तरीके से समाज कर लेता है। ऐसे समाधान में किसी सरकारी या वैधानिक हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं होती। यदि प्राकृतिक समस्याओं के समाधान में कानून हस्तक्षेप करेगा तो उससे लाभ कम और हानि ज्यादा होगी।

वैधानिक व्यवस्थाओं का उद्देश्य व्यक्ति के प्राकृतिक अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी मात्र है। जो वैधानिक व्यवस्था इतना दायित्व पूरा कर लेती है अथवा सफलता की ओर अग्रसर है, तब वैधानिक व्यवस्था कुछ अतिरिक्त कार्य भी कर सकती है, जो उसका दायित्व नहीं है, स्वैच्छिक कर्तव्य मात्र है। भारत की शासकीय व्यवस्था पाँच प्रकार के अपराध रोकने में कमजोर सिद्ध हो रही है। उनमें हैं - चोरी, डकैती और लूट, बलात्कार, मिलावट, कमतौल, जालसाजी, धोखा-धड़ी, हिंसा, आतंक। जब इतने कुल पाँच प्रकार के कार्य ही उसके दायित्व हैं और उन्हें ही रोकने में सरकार सफल नहीं है तो उसे अपना दायित्व छोड़कर शोषण रोकना, जनसंख्या का अनुपात ठीक करना या भूखे को भोजन देना जैसे कार्य में अपने साधन और शक्ति क्यों लगानी चाहिए? यदि कोई सरकार बलात्कार रोकने में असफल दिख

रही हो और वेश्यावृत्ति रोकने में अपनी शक्ति लगा रही हो, और मेरे जैसे विचारक के समझाने पर भी न मान रही हो, तब स्पष्ट होता है कि ऐसी सरकार की नीयत में कहीं खोट है। सरकार यह क्यों नहीं स्पष्ट करती है कि महिला सशक्तिकरण के लिए महिला और पुरुष के बीच दूरी घटनी चाहिए या बढ़नी चाहिए, अथवा दूरी घटाने-बढ़ाने का निर्णय व्यक्ति या परिवार या समाज पर छोड़कर सरकार को अलग हो जाना चाहिए। आज तक मैं या आप भी नहीं समझ सके होंगे कि सरकार दूरी घटाना चाहती है या बढ़ाना चाहती है या दोनों कार्यों को एक साथ करके समाज को परेशान करना चाहती है। पुरुष का पशुत्व किसी भी दृष्टि से पूरी तरह रोकने की आवश्यकता है और वह पशुत्व सिर्फ और सिर्फ बलात्कार में ही दिखता है। मैं बलात्कार को रोकना सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानता हूँ। कमजोर का शोषण असामाजिक कार्य है, अनैतिक कार्य है, अपराध नहीं। इसे अपराध कहना पूरी तरह गलत है। एक बुढ़िया जंगल में बैठी है और एक राजा प्यास से व्याकुल मरणासन्न स्थिति में उससे एक गिलास पानी की याचना करता है, जिसके बदले में बुढ़िया उस राजा से आधा राजपाट माँग लेती है। शोषण हुआ या नहीं और हुआ तो किसका हुआ - यह प्रश्न विचारणीय है। मेरे विचार में शोषण को रोकना समाज का कर्तव्य है, सरकार का नहीं। यदि समाज अपना कर्तव्य न करे तब भी सरकार उस कार्य को नहीं कर सकती, क्योंकि व्यवस्था के अनुसार सरकार जब अपना दायित्व पूरा करने में असफल रहती है तब समाज सरकार के काम में या तो सहयोग करता है या स्वयं उस कार्य को करने लग जाता है। स्पष्ट है कि समाज ऊपर है और सरकार समाज से नीचे।

अपनों से अपनी बात

1. पिछले दिनों मैंने एक पोस्ट लिखी थी जिसके अनुसार मैं आर्य समाज से जुड़ा हुआ हूं। मैं झूठ नहीं बोलता लेकिन परिस्थिति अनुसार सत्य छिपाता भी हूं। कई लोगों ने मेरा मजाक भी उड़ाया लेकिन मैं आपको और क्लियर कर दूं कि नरेंद्र मोदी ने 15 अगस्त को लाल किले में जो भाषण दिया वह अक्षरशः यही था। नरेंद्र मोदी ने लाल किले से विभाजन का तीन लोगों को दोषी बताया नेहरू की कांग्रेस, जिन्ना और लॉर्ड माउंटबेटन। यह बात अर्धसत्य थी। दूसरी ओर नरेंद्र मोदी ने संघ की भूरि-भूरि प्रशंसा की यह बात भी बिल्कुल सत्य है लेकिन स्वतंत्रता तक अर्धसत्य थी। मैंने बचपन में स्वतंत्रता संघर्ष देखा है। उस समय स्वतंत्रता संघर्ष में संघ, सावरकर, जिन्ना, अंबेडकर और कम्युनिस्ट इनकी कोई भूमिका नहीं थी। सावरकर, अंबेडकर, नेहरू, कम्युनिस्ट, जिन्ना सब गांधी विरोधी थे और यह चारों लोग मिलकर लॉर्ड माउंटबेटन के साथ लगातार कुछ न कुछ षड्यंत्र करते रहते थे। इनमें से एकमात्र सरदार पटेल गांधी के साथ थे। संघ उस समय एक मंच था, कोई संस्था नहीं। संघ में चार प्रकार के लोग थे सावरकरवादी जो गांधी के पूरी तरह विरुद्ध थे, आर्य समाज के श्रद्धानंद गुट वाले जो पूरी तरह गांधी के पक्ष में थे, आर्य समाज के क्रांतिकारी और अन्य सब क्रांतिकारी जो पूरी तरह गांधी की नीतियों से असहमत थे।

2. स्वतंत्रता के समय आर्य समाज में दोनों विचारधाराओं के लोग थे। आर्य समाज ने अपने को स्वतंत्रता के बाद सत्ता की लड़ाई से किनारे कर लिया और संघ जो स्वतंत्रता तक दूर था, वह सत्ता संघर्ष में शामिल हो गया। लेकिन गांधीवादियों में आर्य समाज के श्रद्धानंद गुट के सारे लोग शामिल थे और सभी धीरे-धीरे संघ के साथ जुड़ गए। इस तरह संघ में आर्य समाज के श्रद्धानंद गुट के लोग भी शामिल थे और इन लोगों के ही कारण गांधी को प्रातःस्मरणीय भी माना गया और सावरकरवादियों के कारण गांधी का खूब विरोध भी होता रहा और संघ का यही इतिहास रहा। लेकिन हम आर्य समाज के श्रद्धानंद गुट के लोगों ने हार नहीं मानी और हम निरंतर गांधी के मार्ग पर चलते रहे। 40 वर्ष बाद हम लोगों ने फिर से एक नया प्रयास शुरू किया और गांधीवादी, जो नेहरू परिवार के भक्त हो गए थे, और संघ के लोग, जो सावरकर के भक्त हो गए थे इन दोनों को हम लोगों ने एक साथ जोड़ने की मुहिम चलाई और उस मुहिम का यह परिणाम हुआ कि आज संघ नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में गांधी की दिशा में चल पड़ा है। लेकिन वर्तमान भारत की परिस्थितियां ऐसी नहीं हैं कि हम सावरकर, गांधी, अंबेडकर और क्रांतिकारियों के बीच में किसी प्रकार का भेदभाव शुरू करें, क्योंकि यह सब इतिहास की बातें हैं। वर्तमान समय में हमारे सामने संकट हैं जिन्ना, नेहरू और कम्युनिस्टों को मानने वाले। और इसलिए हम लोग एक रणनीति के अंतर्गत अंबेडकरवादी, सावरकरवादी के विषय में चुप रहते हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि हम लोग इनके दीर्घकालिक प्रशंसक हैं लेकिन अब भारत को सावरकर और गांधी के बीच टकराव की जरूरत नहीं है। अब भारत को जरूरत है नरेंद्र मोदी और मोहन भागवत के साथ नेहरू परिवार, जिन्ना भक्त मुसलमान और कम्युनिस्ट के गठजोड़ से टकराव की। मैं नरेंद्र मोदी के 15 अगस्त के भाषण की भरपूर प्रशंसा करता हूं। वर्तमान भारत में संघ बिल्कुल ठीक दिशा में चल रहा है। नरेंद्र मोदी का भाषण सुनकर जिन्ना भक्त, कम्युनिस्ट और नेहरू परिवार के ऊपर से नीचे तक आग लग गई है। अच्छा होगा यह तीनों इस आग में जल मरें और देश तथा भारत गांधी मार्ग पर चलता रहे।

3. हमारे कई साथी मुझसे और अधिक निष्पक्षता की उम्मीद करते हैं। मैं भी इस बात को अच्छी तरह समझता हूं कि समाज में निष्पक्ष और सत्य बोलने वालों की संख्या लगभग शून्य होती जा रही है। यह हमारे समाज का एक बहुत बड़ा संकट है। समाज में निष्पक्ष और सत्य बोलने वालों की संख्या बढ़नी चाहिए। दूसरी ओर मेरे सामने एक यह भी संकट है कि समाज में देवासुर संग्राम चल रहा है। एक तरफ नेहरू परिवार, सांप्रदायिक और संगठित मुसलमान तथा साम्यवादी विचारधारा आसुरी शक्तियों का प्रतिनिधित्व कर रही है, दूसरी तरफ संघ परिवार, वैचारिक संतुलनवादी हिंदुत्व तथा नरेंद्र मोदी मिलकर दैवीय शक्तियों का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में मेरे सामने यह संकट आ जाता है कि मैं बलराम के समान महाभारत युद्ध में निष्पक्ष रहूं अथवा कृष्ण के समान दैवीय शक्तियों की मदद करूं। इस संबंध में मैंने बीच का मार्ग चुना। मैंने यह तय किया कि जब भी मैं समाज में बोलूंगा तो झूठ नहीं बोलूंगा लेकिन यदि सच बोलने से आसुरी शक्तियां मजबूत होती हैं तो मैं सच बोलने से भी परहेज करूंगा। मेरी हार्दिक इच्छा है कि समाज में कुछ ऐसे विश्वसनीय लोग अवश्य तैयार हों जिन्हें सब प्रकार के लोग सत्यवादी समझें और उनके कथन पर विश्वास करें। मैं प्रतिदिन तीन पोस्ट लिखता हूं, मैं लगातार यह कोशिश करता हूं कि इन तीनों पोस्टों में कहीं भी कोई भी बात झूठ न लिखी जाए। इस संबंध में मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मैं किसी भी परिस्थिति में कोई भी बात जानबूझकर झूठ नहीं लिखूंगा। आप मेरे कथन को कहीं भी सत्य के समान कोड कर सकते हैं। लेकिन दैवीय शक्तियों को मजबूत करने के लिए कभी-कभी मैं सत्य को तोड़-मरोड़ कर आपके सामने प्रस्तुत कर सकता हूं लेकिन उसमें बदलाव नहीं करूंगा। इसका अर्थ बदल सकता हूं। मैं अपने साथियों से भी यह चाहता हूं कि आप अपनी विश्वसनीयता को संकट में मत डालिए, अधिकतम सत्य बोलने की आदत डालिए लेकिन इस बात से भी सावधान रहिए कि आपका सत्य आसुरी शक्तियों का हथियार न बन जाए। आप बताइए कि मुझे क्या करना चाहिए।

4. मुझे वह 14 अगस्त बहुत अच्छी तरह याद है जब मैं एक अवयस्क बालक था, मेरी उम्र 8 वर्ष थी लेकिन 8 वर्ष की उम्र में ही मैं लगभग बालिग सरीखा सोचता था। एक तरफ हम लोग स्वतंत्रता की प्रसन्नता मनाने जा रहे थे, मैं भी उस प्रसन्नता में शामिल था और रात होने की प्रतीक्षा कर रहा था जब पूरा देश स्वतंत्र हो जाएगा। 14 तारीख की सायंकाल हमारे घर से 1 किलोमीटर दूर झारखंड में 5रू00 बजे एक बड़ी सभा हुई थी जिसमें पटना से कुछ नेता लोग आए थे और मैं भी उस सभा में स्वतंत्रता की खुशी में शामिल हुआ था। लेकिन बाद में मुझे पता चला कि एक तरफ हमारे नेता लोग स्वतंत्रता की खुशी व्यक्त कर रहे थे तो दूसरी तरफ गांधी उस 14 अगस्त को विभाजन के दर्द से दुखी थे। गांधी अकेले ऐसे दुखी व्यक्ति नहीं थे और भी बहुत से लोग रहे होंगे जो उस बंटवारे से या तो प्रभावित थे या उस हिंसा से दुखी थे। मुझे उस उम्र में इस संबंध में कोई जानकारी नहीं थी लेकिन यह बात स्पष्ट है कि गांधी उस

विभाजन के परिणाम से होने वाली हिंसा से दुखी थे और आज भी मैं इस बात पर गंभीरता से विचार करता हूं कि उस बाल्यपन में 14 अगस्त के दिन मुझे स्वतंत्रता की खुशी मनानी चाहिए थी अथवा विभाजन का दर्द महसूस करना चाहिए था।

5. आज भी मैं पूरी तन्मयता से इस बात को सोचता हूं कि हम चाहे जिस स्थिति में जिएं लेकिन अब हम कभी इस तरह के विभाजन की परिस्थितियां नहीं होने देंगे। यदि ऐसी स्थिति आएगी और विभाजन का यदि कोई खतरा उपस्थित होगा तो उस विभाजन की तुलना में हम पहले ही गृह युद्ध शुरू कर देंगे। हम आपस में मरने-मारने के लिए तैयार हो जाएंगे लेकिन किसी भी परिस्थिति में अब हम विभाजन का दर्द झेलने को तैयार नहीं हैं। हम आप सब मिलकर सदा-सदा के लिए ऐसी शक्तियों को भारत में समाप्त कर देंगे। हम पूरा प्रयत्न करेंगे कि वैचारिक संतुलनवादी हिंदुत्व की विचारधारा को सभी मुसलमान समझें और यदि कोई न समझना चाहे तो वह उसकी मर्जी। हम उसकी सुरक्षा नहीं देंगे। हम इस बात की गारंटी देंगे कि वैचारिक संतुलनवादी विचारधारा के मुसलमान पर कोई आक्रमण होता है तो उसकी सुरक्षा की गारंटी हम अवश्य देंगे। इस तरह हम दोनों दिशाओं से विभाजन के खतरे को समाप्त करने के लिए अपने को तैयार रखेंगे। अब 14 अगस्त की वह विभाजन की विभीषिका सदा-सदा के लिए समाप्त हो जानी चाहिए।

6. मैंने प्रातःकाल अपनों से अपनी बात के अंतर्गत आपको यह बताया था कि सारे विश्व की समस्याओं के समाधान के लिए हमने निष्कर्ष निकाला है कि एक राजनीतिक सत्ता के साथ-साथ सामाजिक सत्ता भी समानांतर चलती रहे। इस कार्य के लिए हमने तीन दिशाओं से सक्रियता तय की है एक है राजनीतिक व्यवस्था परिवर्तन, दूसरा है सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन, तीसरा है वैचारिक व्यवस्था परिवर्तन। राजनीतिक व्यवस्था परिवर्तन के अंतर्गत हम लोगों ने तंत्र मुक्त संविधान की योजना बनाई है, जिसका मतलब है कि संविधान संशोधन में वर्तमान समय में तंत्र की असीम भूमिका है, उस भूमिका में ग्राम सभाओं को भी सहभागी बनाया जाए। दूसरा कार्य है सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन, इसके लिए हम लोगों ने यह तय किया है कि सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन का केंद्र परिवार व्यवस्था को बनाया जाए। परिवार व्यवस्था में यदि कुछ कमियां हों तो ठीक कर दिया जाए, लेकिन परिवारों को ही संवैधानिक मान्यता भी मिल जाए और समाज व्यवस्था की पहली इकाई परिवारों को माना जाए। यह परिवार सशक्तिकरण योजना है। तीसरा कार्य है विचार सशक्तिकरण योजना, अर्थात समाज में एक ऐसे निष्पक्ष और स्वतंत्र विचारकों का ग्रुप बने जो राजनीति, समाज, व्यक्ति, धर्म सहित सबका मार्गदर्शन कर सके लेकिन किसी कार्य में सीधा हस्तक्षेप न करें। इन तीन व्यवस्थाओं के तालमेल को ही हम संपूर्ण व्यवस्था परिवर्तन मान रहे हैं।

7. हम लोगों के पूरे भारत में तीन कार्यालय हैं-एक रामानुजगंज में है जो हमारा केंद्रीय कार्यालय है, इस कार्यालय का सारा संचालन वर्तमान समय में ज्ञानेंद्र आर्य जी करते हैं। दूसरा कार्यालय दिल्ली में है जिसका संचालन नरेंद्र सिंह जी करते हैं। तीसरा कार्यालय ऋषिकेश में है, इसका संचालन बृजेश राय जी कर रहे हैं। ऋषिकेश कार्यालय पूरी तरह विचार मंथन ग्रुप का कार्य कर रहा है। इसके अंतर्गत प्रतिदिन रात को 8रू00 बजे से 9रू30 बजे तक चर्चा कार्यक्रम के अंतर्गत स्वतंत्र चर्चा आयोजित होती है। रामानुजगंज और दिल्ली कार्यालय मिलकर पूरा अन्य कार्य संभाल रहे हैं, जिसके अंतर्गत समाज सशक्तिकरण तथा संविधान की तंत्र-मुक्ति का कार्यक्रम शामिल होता है। तीनों ग्रुप संयुक्त रूप से मिलकर देश भर में एक संस्थागत ढांचा बना रहे हैं जिसका नाम है ज्ञान केंद्र। जगह-जगह पर ऐसे ज्ञान केंद्र बनाए जा रहे हैं, जिसके माध्यम से यह तीनों ग्रुप अलग-अलग संस्थागत ढांचा आगे बढ़ाते रहेंगे। इस तरह हम लोग सब मिलकर मां संस्थान के नेतृत्व में यह सारा कार्य आगे बढ़ा रहे हैं। आप हमारे सभी मित्र अन्य प्रश्न भी कर सकते हैं, सुझाव भी दे सकते हैं। यदि कोई साथी किसी भिन्न तरीके से कार्य करना चाहते हैं अथवा कर रहे हैं तो उन्हें मां संस्थान सहयोग भी करेगा। आप अपनी योजना बता सकते हैं। 8. हम प्रस्तावित नई विश्व व्यवस्था पर चर्चा कर रहे हैं। इस व्यवस्था में राज्य व्यवस्था और समाज व्यवस्था दोनों को अलग-अलग कर दिया जाएगा। हम इसके लिए सिर्फ दो बदलाव चाहेंगे। पहला कि संविधान संशोधन में राज्य व्यवस्था के साथ-साथ समाज व्यवस्था की भी भूमिका हो। दूसरा समाज व्यवस्था को मजबूत करने के लिए आदर्श परिवार व्यवस्था को मजबूत होना चाहिए। यदि इन दो सुझावों को स्वीकार कर लिया गया तो दुनिया की अधिकांश समस्याएं अपने-आप सुलझ जाएंगी। कुछ समस्याएं जो राज्य पैदा करता है उन्हें समाज सुलझा लेगा और कुछ समस्याएं जो समाज नहीं सुलझा सकता, उन्हें राज्य सुलझा लेगा। हमारी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, संवैधानिक, धार्मिक सब प्रकार की व्यवस्थाओं में अपने आप बदलाव आ जाएगा, हमें कुछ भी करने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

इस पूरी व्यवस्था का यह परिणाम होगा कि समाज में हिंसा रुक जाएगी, टकराव रुकेंगे, आर्थिक असमानता कम हो जाएगी, धर्म-जाति के झगड़े अपने आप कम हो जाएंगे, आत्महत्याएं बहुत कम हो जाएंगी, न्यायालय के मुकदमे बहुत कम हो जाएंगे, परिवारों में तलाक होंगे ही नहीं, व्यक्तियों के मन में पैदा होने वाला असंतोष भी कम हो जाएगा। आप एक भी ऐसी समस्या नहीं बता सकते जो समस्या इन दो सुझावों में बदलाव से नहीं सुलझ जाएगी। क्योंकि जब तक हम किसी समस्या का समाधान दूसरे से उम्मीद करते हैं तब तक उसके समाधान से संतुष्टि नहीं होती, और यदि उस समस्या के समाधान की जिम्मेदारी आपकी खुद हो जाती है तो आप उस समाधान से संतुष्ट हो जाते हैं। इन्हीं शब्दों को हम लोगों ने लोक स्वराज प्रणाली नाम दिया है। हम मां संस्थान के अंतर्गत सब लोग एकजुट होकर वैचारिक, सामाजिक, संस्थागत सभी तरीकों से इस विचार को निरंतर आगे बढ़ा रहे हैं।

9. हम एक नई साफ -सुथरी व्यवस्था की चर्चा कर रहे हैं। हम जानते हैं कि वर्तमान समय में हमारी पूरी समाज व्यवस्था एक जेलखाने में बंद है। हमारी राज्य व्यवस्था ने पूरी समाज व्यवस्था को गुलाम बना लिया है। इसलिए हमें इस गुलामी से मुक्ति चाहिए - यह हमारी पहली आवश्यकता है। लेकिन यदि

हम गुलामी से मुक्ति के बाद की योजना नहीं बनाएँगे तो भारत का वही हाल होगा जैसा स्वतंत्रता के बाद एक नई राजनीतिक गुलामी के रूप में आया। स्पष्ट है कि स्वतंत्रता हमारी पहली प्राथमिकता है लेकिन नई समाज व्यवस्था पर चर्चा भी उसके साथ चलती रहनी चाहिए। हमें स्वतंत्रता संघर्ष के लिए अधिक शक्ति लगानी होगी और नई व्यवस्था के एक प्रारूप पर विचार-मंथन भी करते रहना होगा। इसीलिए हम लोगों ने दो अलग-अलग ग्रुप बनाए हैं। हम लोगों का एक ग्रुप स्वतंत्रता संघर्ष में लगा हुआ है जिसे हम ज्ञान केंद्र के रूप में विकसित कर रहे हैं। यह ग्रुप तंत्रमुक्त संविधान के लिए समाज में जन-जागरण कर रहा है। लेकिन एक दूसरा ग्रुप संविधान सभा के रूप में नई समाज व्यवस्था पर भी दिन-रात सोच रहा है। हम ऐसा कोई खतरा नहीं उठा सकते कि स्वतंत्रता के बाद समाज में शून्य बन जाए और उस शून्य को भरने के लिए कोई भी एक आलतू-फालतू इकाई आ जाए। हम पूरी तरह सावधानी के साथ वर्तमान संविधान को तंत्रमुक्त करने और नई व्यवस्था के प्रारूप पर चर्चा करने - इन दोनों मार्गों पर एक साथ काम कर रहे हैं। माँ संस्थान इस दिशा में काफी गंभीर है।

10. हम नई राजनीतिक व्यवस्था में से दल-बदल कानून तथा हिंदू कोड बिल को पूरी तरह समाप्त कर देंगे। हमारी नई व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति को एक नागरिक माना जाएगा। परिवार, गाँव, जिला, प्रदेश और राष्ट्र को संगठन माना जाएगा। अन्य किसी संगठन को संवैधानिक मान्यता नहीं होगी। कोई भी व्यक्ति कभी भी स्वेच्छा से अपना दल बदल सकता है। जो संसद में चुनकर जाएगा उसे संसद में अपनी बात करने की पूरी स्वतंत्रता होगी। उस पर किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं होगा। संसद में दलों को मान्यता नहीं, व्यक्तियों को मान्यता होगी। प्रत्येक व्यक्ति किसी भी विषय पर अपनी स्वतंत्र बात रख सकता है। दलों के साथ जुड़ना उसका बाहरी काम है, उसकी स्वतंत्रता है, लेकिन उसे संवैधानिक मान्यता प्राप्त नहीं होगी। दल-बदल कानून अथवा हिंदू कोड बिल यह हमारी व्यवस्था के लिए कलंक है। देश के राजनेताओं ने अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए इस प्रकार के कानून बनाए थे। यह गंदे कानून हैं। यह हमारी भारत की धर्मनिरपेक्षता और समान नागरिक संहिता के खिलाफ है और इस प्रकार के कलंक को हम जल्दी ही मिटाने की कोशिश करेंगे।

महिलाओं पर चर्चा

1 व्यभिचार और बलात्कार अलग-अलग होते हैं। व्यभिचार कोई अपराध नहीं होता, अनैतिक हो सकता है, बलात्कार अपराध होता है। आसाराम बापू, राम रहीम, प्रज्वल रेमन्ना या कुछ अन्य लोगों ने बलात्कार नहीं किया, व्यभिचार किए थे, भले ही व्यभिचार के लिए ही इन लोगों को बहुत कठोर दंड दिया गया क्योंकि कुछ ऐसी ही महिलाओं के दबाव में आकर राजनेताओं ने इस प्रकार के कड़े कानून बना दिए जिससे ऐसी धूर्त महिलाएं आसानी से ब्लैकमेलिंग कर सकें। अभी-अभी कुछ दिन पहले कुछ प्रसिद्ध कथा वाचकों ने भी महिलाओं के व्यभिचार पर कुछ टिप्पणियां कीं। मुझे यह बात व्यक्तिगत रूप से जानकारी है कि महिलाओं की तुलना में पुरुष अधिक व्यभिचारी होते हैं। अधिकांश साधु या आश्रमों के प्रबंधक कहीं ना कहीं इस प्रकार के व्यभिचार में लिप्त होते हैं। ऐसे संत, साधु या साध्वी इन सब की भी पवित्रता की कोई गारंटी नहीं है क्योंकि यह एक प्राकृतिक भूख है। इसलिए इस प्रकार की चर्चा होना उचित नहीं था क्योंकि इनमें अनेक ऐसे लोग हैं जो सिर्फ अपने को पवित्र दिखलाने के लिए ही दूसरों पर लांछन लगाते हैं। सच बात यह है कि कथा वाचकों ने जो बात कही वह बात सच है, इस तरह की महिलाओं में यह आचरण में गिरावट आई है लेकिन इसके लिए वे दोषी नहीं हैं क्योंकि यदि आप विवाह की उम्र बढ़ाते जाएंगे, यदि आप महिला पुरुष के बीच की दूरी घटाते जाएंगे तो आपको ऐसी कुछ घटनाओं से आंख बंद करना ही पड़ेगा। जो इन कथा वाचकों ने गलतियां की हैं, उन्हें इस प्रकार की चर्चा से बचना चाहिए था। लड़कियां कैसे कपड़े पहनती हैं यह देखना साधु संतों का काम नहीं है, यह देखना परिवार का कार्य है। लेकिन यह साधु संत अनावश्यक परिवारों के आंतरिक मामलों में भी दखल देते हैं, जो उचित नहीं है। सत्य बोलना हमेशा आवश्यक नहीं है, परिस्थिति अनुसार सत्य को छुपाना भी पड़ता है। हमारे साधु संतों को इस प्रकार के सामाजिक विषयों पर गंभीरता से विचार करना चाहिए।

2 मैंने महिला पुरुष संबंधों पर एक टिप्पणी की थी और लिखा था कि वर्तमान बदले हुए वातावरण में हमें महिला पुरुष संबंधों पर फिर से विचार करना चाहिए। बहुत से उच्च सिद्धांत वालों को यह बात बुरी लगी थी। मुझे भी मालूम है कि उच्च चरित्र वालों को इस तरह की साफ बातें पसंद नहीं होतीं लेकिन हम लोग विचारक हैं, हम लोगों को तो स्पष्ट बात रखनी ही चाहिए। मैं फिर से यह मानता हूं कि हर पुरानी बात सही नहीं हो सकती, परिस्थिति अनुसार उसमें यदि संशोधन नहीं किया जाएगा तो कोई भी नई गलत बात समाज में प्रचलित हो जाएगी और हम उसे रोक नहीं सकेंगे। वर्तमान महिला पुरुष संबंधों के मामले में भी हम अपनी पुरानी मान्यताओं से इतना अधिक चिपकते रहे, हमारे साधु संत इस तरह के आदर्श समाज व्यवस्था की राह दिखाते रहे जो वर्तमान परिस्थितियों में संभव नहीं था और इसीलिए विदेशी संस्कृति यहां मजबूती से सामने आ गई और हम उसे नहीं रोक पाए। अच्छा होगा कि हम समय के साथ संशोधन करें। यह बात जगजाहिर है कि समाज को गलत कहने में सबको बहुत मजा आता है, खासकर नेताओं और साधु संतों को तो इसमें आनंद ही आनंद आता है। लेकिन सच्चाई है कि समाज गलत नहीं होता, हम गलत हो सकते हैं और इसलिए समाज को दोष न देकर हमें वर्तमान स्थिति पर विचार करना चाहिए।

महिला सशक्तिकरण के नारे से जितना ज्यादा नुकसान पहुंचा है वह बहुत ही अधिक घातक है। कुछ मुट्ठी भर चरित्रहीन महिलाओं ने संगठित होकर दबाव बनाकर अपना न्यूज़ेंस वैल्यू बढ़ावा लिया और परिणाम हुआ कि बड़ी संख्या में बेचारी महिलाएं अविश्वसनीय हो गईं, परेशान हो गईं। मुझे अंदर तक जानकारी है कि बहुत सी गरीब महिलाएं बड़े घरों में काम करती थीं, कहीं ना कहीं उनके बड़े घरों में अवैध शारीरिक संबंध भी बन जाते थे। बड़े घरों के मालिक और यह महिला नौकरानियां दोनों अपने-अपने तरीके से संतुष्ट रहते थे, समाज को कोई नुकसान नहीं होता था। लेकिन इन आधुनिक महिलाओं ने इन दोनों के बीच में ऐसी अविश्वास की दीवार खड़ी कर दी है कि दोनों ही पक्ष परेशान हैं लेकिन कुछ भी करने की स्थिति में नहीं हैं। हमारे साधु संत इस विषय पर बोल नहीं सकते क्योंकि या तो उनमें से अनेक गुप्त रूप से चरित्रहीन हैं अथवा उच्च चरित्रवान हैं। लेकिन यह दोनों ही समाज में खुलकर बात करने की स्थिति में नहीं हैं क्योंकि दोनों को ही अपने उच्च चरित्र पर घमंड करना पड़ता है, भले ही झूठ हो। मैं चाहता हूं कि हम इस प्रकार के लोगों को छोड़ दें जो दिन-रात समाज को गाली देते रहते हैं। हम समाज पर गंभीरता से विचार करें कि वर्तमान परिस्थितियों में सामाजिक मान्यताओं में किस प्रकार संशोधन किया जा सकता है। हमें उन हजारों लाखों महिलाओं और पुरुषों के बारे में सभी सोचना चाहिए जिनके अंदर एक अविश्वास की दीवार लगातार बढ़ाई जा रही है और उस दीवार का धूर्त महिलाएं लाभ उठा रही हैं। मैं चाहता हूं कि इस संवेदनशील विषय पर हम आप जिम्मेदार लोग खुलकर बात करें।

3 महिला पुरुष के संबंधों पर मेरे विचार अलग-अलग प्रकार के हैं। मैं इस बात का पक्षधर हूं कि विवाह की उम्र घटाई जाए, महिला पुरुष के बीच में जो दूरी घट रही है उसे संतुलित किया जाए, अधिक घटाने की भी जरूरत नहीं है और बढ़ाने की भी जरूरत नहीं है। मैं उन लोगों के पक्ष में नहीं हूं जो महिला और पुरुष के बीच में दूरी बढ़ाना चाहते हैं। मैं तो इस बात का पक्षधर हूं कि महिला और पुरुष के बीच के संबंधों का निर्णय परिवार पर छोड़ दिया जाए। इस संबंध में समाज को या धर्म गुरुओं को कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि महिला पुरुष के आपसी संबंध बहुत संवेदनशील होते हैं। अतृप्त महिला या पुरुष, यह दोनों खतरनाक होते हैं। इसलिए ना तो हम कामवासना को खुली छूट दे सकते हैं और ना उसे बलपूर्वक रोक सकते हैं। मैं उन साधु संतों के बिलकुल खिलाफ हूं जो ऊंची-ऊंची असंभव बातें करते हैं, जो महिला और पुरुष के बीच में लगातार दूरी बढ़ाने के पक्षधर हैं। मैं इसके विरुद्ध चाहता हूं कि महिला और पुरुष के बीच में दूरी घटे या बढ़े यह या तो वे स्वयं तय करें या उनके परिवार तय करें। धर्म गुरुओं और समाज को इसमें हस्तक्षेप बंद कर देना चाहिए, सरकार को तो पूरी तरह इसे बाहर हो ही जाना चाहिए।

4 मैंने महिला पुरुष संबंधों के विषय में हमारे धर्म गुरुओं और राजनेताओं की भूमिका पर आंशिक चर्चा की है। प्राकृतिक रूप से मुझे यह जानकारी है कि महिला पुरुष के व्यक्तिगत शारीरिक संबंधों के मामले में यह प्राकृतिक नियम है कि पुरुष को हमेशा आक्रामक और महिला को आकर्षक रहना चाहिए। यह दोनों बातें दोनों के व्यक्तिगत स्वभाव में होनी चाहिए अर्थात यदि पुरुष आकर्षण बन जाएगा तो यह प्रकृति विरुद्ध है, महिला अगर आक्रामक स्वभाव की बनेगी तब भी यह प्रकृति विरुद्ध है।लेकिन मैं पिछले लंबे समय से देख रहा हूं कि हमारे धर्मगुरु और राजनेता दोनों ही इस दिशा में प्रकृति विरुद्ध कार्य कर रहे हैं। हमारे धर्मगुरु महिलाओं को समझाते हैं कि आप आकर्षक ना हो, आपके कपड़े ऐसे हों, आपका रहने-सहन ऐसा हो कि आपके स्वभाव में आकर्षण ना रहे। दूसरी ओर हमारे राजनेता महिलाओं को यह भी समझाते हैं कि आप कराटे सीखिए, आपका स्वभाव आक्रामक होना चाहिए, आपको सुरक्षा करने की ट्रेनिंग दी जानी चाहिए। इस तरह हम महिलाओं को क्या दिशा देना चाहते हैं यह हम खुद क्लियर नहीं है। एक तरफ हम महिलाओं को आक्रामक बनाना चाहते हैं दूसरी तरफ हम पुरुषों को आक्रामकता छोड़ने की सलाह देते हैं। मेरी यह सलाह है कि इस संबंध में धर्म गुरुओं और राजनेताओं को बिल्कुल बाहर हो जाना चाहिए। यह मामला व्यक्तिगत और पारिवारिक है, परिवार तय करेगा उस परिवार की किस महिला को आकर्षक होना चाहिए और किसको आक्रामक होना चाहिए, परिवार तय करेगा कि पुरुष को क्या करना चाहिए। लेकिन हमारे समाज में यह धर्मगुरु और राजनेता कुछ जानते नहीं हैं और अनावश्यक सामाजिक व्यवस्था में हस्तक्षेप करते हैं। मेरा फिर से निवेदन है कि सामान्यतया महिलाओं को आकर्षक और पुरुषों को आक्रामक होना चाहिए। विशेष परिस्थिति में परिवार दोनों के बारे में अलग-अलग सोच सकता है। धर्म गुरुओं और राजनेताओं को इस चर्चा से बाहर हो जाना चाहिए।

गांधीवाद

अर्पित अनाम जी से फेसबुक पर कुछ चर्चा हुई। आज से 30 वर्ष पहले हम सैकड़ों लोग रामानुजगंज में एक साथ बैठे थे। उसमें आधे लोग संघ से जुड़े हुए थे और आधे लोग गांधीवादी थे। कुछ समाजवादी भी थे लेकिन सारे लोग अच्छे जिम्मेदार पदों पर थे। 30 साल पहले की उन बैठकों में बहुत से लोग तो भगवान के यहाँ चले गए लेकिन अभी 5-6 लोग ऐसे हैं जो अभी भी जीवित हैं। अमरनाथ भाई, कर्नाटक के डॉक्टर पाटिल - यह दोनों तो प्रसिद्ध गांधीवादी हैं। अर्पित अनाम जी, बहादुर सिंह जी यादव, जयशंकर कुमार जी, बेगूसराय - यह भी ऐसे लोग हैं जो उस समय रामानुजगंज में 15-15 दिनों तक बैठकर संविधान पर मंथन करते थे। और विशेष रूप से गांधीवादियों और संघ के पदाधिकारी, कुछ नक्सलवादियों को भी तथा समाजवादियों को भी, सबको मिलकर एक साथ यह प्रयत्न कर रहे थे कि अच्छे लोगों के बीच में यह संघ और गांधीवाद का टकराव समाप्त होना चाहिए। यह बात 30 साल पहले की है। लगातार हम लोग इस दिशा में अभी तक प्रयत्नशील रहे। इस प्रयत्न में अर्पित जी, एम. एच. पाटिल तथा अन्य साथियों का भी लगातार प्रयत्न जारी रहा। मैं भी उन प्रयत्नों में शामिल रहा क्योंकि मैं एक ऐसा व्यक्ति था जिस पर गांधीवादियों को भी पूरा विश्वास था और संघ के लोगों को भी पूरा विश्वास था। आज मुझे यह देखकर खुशी हो रही है कि संघ, नरेंद्र मोदी इन लोगों को गांधी पर विश्वास हुआ है। आज उमा भारती ने भी, जो प्रायः गांधी विरोधी रह चुकी हैं, उन्होंने यह घोषणा की कि गोडसे हत्यारा था, उसने गांधी की हत्या करके भारत का बहुत बड़ा नुकसान किया है। मेरे विचार से यदि इस प्रकार संघ के लोग अब गांधी की परिस्थितियों को समझ रहे हैं तो इसका स्वागत करना चाहिए। मैं अपनी उम्र के इस पड़ाव पर पूरी तरह संतुष्ट हूँ कि हम लोगों ने मिलकर पिछले 30 वर्षों में जो मेहनत की है उसके अच्छे परिणाम आज हमें देखने को मिल रहे हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि नेहरू परिवार, साम्यवाद, संगठित इस्लाम कृ यह तीनों अब एकजुट होकर भी गांधी के नाम की दुकानदारी नहीं कर पाएंगे। अब थोड़े से गिने-चुने कम्युनिस्ट ही गांधीवादियों के नाम पर नेहरू परिवार की चापलूसी करते हुए मिलते हैं अन्यथा लगभग सब गांधीवादी अब इनसे किनारे हो चुके हैं। इसी तरह गांधी को गाली देकर अपनी राजनीति चमकाने वाले सावरकरवादी और गोडसेवादी भी अब धीरे-धीरे समाप्त होते जा रहे हैं। मुझे यह पूरी उम्मीद है कि अब अतिवादी सावरकरवादी और नेहरू परिवार गांधी विचारधारा के सामने लुप्त हो जाएंगे।

पिछले दिनों जब राहुल गांधी ने भाषण दिया था, तब उस भाषण को सुनकर मुझे भी यह संदेह हुआ था कि चुनाव आयोग को इस संबंध में स्पष्टीकरण देना चाहिए। मेरे मित्र अर्पित अनाम जी भी इस विचार के थे और उन्होंने लिखा भी था। यही नहीं, मेरे कुछ अन्य साथियों ने भी यह बात साफ की थी कि यह चुनाव आयोग का, राहुल का मामला बहुत गंभीर है। मैं भी प्रभावित हुआ था और मैंने एक लेख लिखा था जिसमें मैंने यह लिखा था कि चुनाव आयोग को इस संबंध में स्पष्ट करना चाहिए। लेकिन तीन दिन बीतते-बीतते ही मुझे यह महसूस हुआ कि मैं गलत हूँ। जिस व्यक्ति और जिस गिरोह ने जीवन भर झूठ बोला है उस पर इतनी जल्दी विश्वास कर लेना यह मेरी कमजोरी है। इसलिए आज सवेरे मैंने एक गंभीर लेख लिखकर अपनी बात साफ भी की और आज दिन भर के घटनाक्रम को जिस तरह संचालित किया गया कि चुनाव आयोग ने सांसदों के 30 लोगों के ग्रुप को चर्चा करने के लिए आमंत्रित किया और अपनी पोल खुलने के डर से राहुल, प्रियंका, अखिलेश ने नाटक शुरू किया कृ उस नाटक को देखकर मुझे यह लगा कि मैं वास्तव में परसों पूरी तरह गलत था। मैं पहले भी समझता था कि जो राहुल गांधी, अखिलेश यादव तथा सारे विपक्षी ईवीएम पर प्रचार कर रहे हैं कृ यह सारे जन्मजात झूठे हैं। यह जो ईवीएम पर इस प्रकार के आरोप लगा रहा है वह आदमी कभी जीवन में सच बोल ही नहीं सकता। लेकिन इसके बाद भी, इतनी सावधानी के बाद भी, मैं राहुल के भाषण सुनकर प्रभावित हो गया। इसका मुझे स्वयं पर कष्ट है। मैं अपने सभी साथियों को यह बात स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि चुनाव आयोग चाहे सही हो या गलत, इस विषय पर मैं बात नहीं कर रहा। मैं तो यह समझ रहा हूँ कि यदि वर्तमान सरकार और चुनाव आयोग ने मिलजुलकर कहीं घपला करके भी राहुल, साम्यवाद और संगठित इस्लाम को भारत से निकाल बाहर किया तो मैं इसे देशभक्ति समझूँगा। मैं अपने साथियों से यह जानना चाहता हूँ कि चुनाव आयोग अगर घर-घर जाकर साफ मतदाता सूची बना रहा है और इससे विदेशी मुसलमान निकल जा रहे हैं तो इन झूठे लोगों को इसमें आपत्ति क्यों है। इसलिए मैं अपने पाठकों से अपनी भूल के लिए क्षमा माँगता हूँ और अब मैं इन लोगों पर कभी विश्वास नहीं करूँगा।

भारत में संघ की बढ़ती ताकत

भारत में दो ही संस्कृतियों के बीच में टकराव चल रहा है। एक संघ की संस्कृति है जिसमें हिंदुत्व प्रमुख है, दूसरी साम्यवादी संस्कृति है जिसमें वर्ग संघर्ष, हिंसा, छल-कपट सब महत्वपूर्ण है। इन दोनों के टकराव के बीच में नेहरू परिवार लगातार साम्यवादियों के साथ रहा और संघ परिवार हिंदुओं के साथ। पिछले 10 वर्षों से यह बात साफ दिखती जा रही है कि साम्यवादी संस्कृति लगातार कमजोर हो रही है और संघ परिवार मजबूत हो रहा है। आज उपराष्ट्रपति का महत्वपूर्ण पद भी संघ के हाथों में खिसक गया। अभी तक राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, चुनाव आयुक्त यह सब तो पोस्ट संघ के पास थे ही। संघ सरकारी कर्मचारियों में भी लगातार अपने को भर रहा था, लेकिन अभी तक उपराष्ट्रपति पर संघ का कोई दबाव नहीं था। अब लगता है कि उपराष्ट्रपति का पद भी संघ के पास चला जाएगा और कम्युनिस्ट या कम्युनिस्टों के प्रमुख राहुल गांधी सिर्फ छाती पीटते रहेंगे। जैसे दिन-रात चुनाव आयोग को गाली दे रहे हैं, इस तरह उपराष्ट्रपति को भी गाली देते रहेंगे। अरे भाई यह गाली देना समाधान नहीं है। संघ की ताकत लगातार बढ़ती जा रही है। धीरे-धीरे न्यायपालिका में भी संघ की ताकत बढ़ रही है और जल्दी ही न्यायपालिका पर भी संघ का प्रभुत्व होगा और उसके बाद राहुल गांधी के पास भगाने के लिए हवाई जहाज को छोड़कर कुछ नहीं बचेगा। इसलिए राहुल गांधी छाती पीटना बंद करें और गंभीरता से इस बात पर विचार करें कि भारत में सारे प्रयत्नों के बाद भी संघ की ताकत क्यों बढ़ रही है और साम्यवाद क्यों खत्म हो रहा है। मेरी राहुल गांधी को सलाह है कि हिंदुत्व और हिंदुओं को गाली देकर अगर राहुल गांधी मुसलमान और कम्युनिस्टों के भरोसे भारत में राजनीति करना चाहते हैं तो वे भूल कर रहे हैं। वह नेहरू का जमाना गया। अब भारत की जनता बहुत सावधान हो गई है, समझदार हो रही है और अब आपके खानदानी बहकावे में भारत की जनता नहीं आने वाली है। उपराष्ट्रपति धनखड़ को महाभियोग के नाम से डरा कर अपने किनारे कर लिया लेकिन लगता है कि चुनाव आयुक्त अब आपके महाभियोग से डरने वाले नहीं दिखते।

संविधान सभा

वर्तमान दुनिया में लगभग 90% लोगों की ऐसी आबादी है जो वर्तमान समस्याओं पर तो चिंता करते हैं लेकिन उसके आगे नहीं सोच पाते। वे केवल समस्याओं की लिस्ट बता सकते हैं। 7-8% आपको ऐसे लोग भी मिलेंगे जो उन समस्याओं के कारण तो खोज लेते हैं लेकिन इसके आगे नहीं बता पाते। 1-2% आपको ऐसे भी लोग मिलेंगे जो समाधान भी बता सकते हैं, लेकिन उनकी संख्या बहुत कम है। लेकिन ऐसे लोग तो दिखते ही नहीं हैं जिनमें चारों गुण मौजूद होंकृअर्थात वे समस्याएं भी समझते हैं, उसके कारण भी समझते हैं, उसके समाधान को भी समझते हैं और उस समाधान के आधार पर क्रिया के महत्व को भी समझते हैं। ऐसे लोग समाज में बहुत कम हैं, लेकिन ऐसे लोगों की संख्या लगातार बढ़नी चाहिए, यह भी आवश्यक है। क्योंकि सिर्फ समस्याओं की गिनती करना या उनके कारण बताना ही पर्याप्त नहीं है, हमें समाधान भी बताना पड़ेगा और उसके क्रियान्वयन का तरीका भी बताना पड़ेगा। मां संस्थान दुनिया का पहला ऐसा संस्थान है जो चारों दिशाओं में एक साथ काम कर रहा है।

मेरा लंबे समय से यह मानना रहा है कि स्वतंत्रता के बाद भारत में जो संविधान सभा बनी और जिसने कार्य किया, उस संविधान सभा में सामाजिक विचारकों का अभाव था। उसमें भारतीय संस्कृति को समझने वाले लोग भी नहीं थे। उस संविधान सभा में या तो वे लोग थे जिन्होंने स्वतंत्रता संघर्ष किया था अथवा वे लोग थे जो अधिवक्ता थे, या वे लोग थे जो कानून के ज्ञाता थे और कुछ ऐसे लोग भी थे जो किसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते थे। उन्हें समाज का कोई ज्ञान नहीं था। उस समय की परिस्थितियों के अनुसार ऐसी मजबूरी भी रही होगी क्योंकि संविधान सभा स्वतंत्रता के पहले अंग्रेजों द्वारा बनाई गई थी, स्वतंत्रता के बाद नहीं। उस स्थिति अनुसार कुछ ऐसी भी परिस्थितियां हो सकती हैं कि उस समय समाज में ऐसे विचारकों का अभाव रहा हो जिन्हें संविधान सभा में जोड़ा जाए। कारण कोई भी हो सकता है, लेकिन संविधान सभा ठीक नहीं बन सकी थी। अब संविधान सभा बने 80 वर्ष बीत गए हैं। अब भारत सैद्धांतिक और वैचारिक धरातल पर भी बहुत आगे निकल गया है। ऐसी स्थिति में एक ऐसी संविधान सभा अवश्य होनी चाहिए जिसमें विचारकों की प्रमुख भूमिका हो। प्रश्न यह खड़ा होता है कि क्या समाज में ऐसे विचारक विकसित हुए हैं? तो अभी ऐसा भी अभाव दिखता है। स्वतंत्र विचार का अभी कोई मंच नहीं है और इसलिए संविधान सभा के लिए किन समाज वैज्ञानिकों को आमंत्रित किया जाए और उन वैज्ञानिकों को कितनी समाज व्यवस्था का अनुभव या ज्ञान है, इसकी कोई स्पष्ट स्थिति नहीं है। इसलिए हमारे सामने यह संकट पैदा होता है कि अगर कोई संविधान सभा बनेगी तो उस संविधान सभा में किन लोगों को शामिल किया जाए, उनकी क्या योग्यता है, उनकी क्या उपयोगिता हैकृइस गंभीर विषय पर हम लंबे समय से सोचते रहे हैं। आज के दूसरे सत्र में हम उस प्रारूप पर चर्चा करेंगे जिस आधार पर हम संविधान सभा का एक नया ढांचा बनाने की सोच रहे हैं।

मैंने आपको संविधान सभा का प्रस्ताव दिया है इसका यह अर्थ नहीं है कि हम वर्तमान संविधान की जगह कोई नए संविधान की सोच रहे हैं अथवा हम वर्तमान संविधान में किसी संशोधन का प्रस्ताव तैयार कर रहे हैं। ऐसी कोई बात नहीं है हमारा यह मानना है कि भारत का संविधान हमारी पूरी सामाजिक व्यवस्था में दखल दे रहा है। संविधान में राज्य को राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक सब प्रकार के हस्तक्षेप की छूट दे दी है। इस संविधान में क्या बदलाव होना चाहिए वह हमारी चर्चा का बाद का विषय होगा। पहले तो हमारी चर्चा इस बात पर निर्भर करेगी कि हम सब संविधान सभा के लोग आपस में बैठकर इस प्रकार के विषय पर विचार मंथन शुरू करें, क्योंकि जब विचार मंथन होगा तब विचार मंथन के बाद निष्कर्ष निकलेगा। उस निष्कर्ष को बाद में प्रस्ताव का रूप दिया जाएगा और उसके अंतिम चरण में फिर हम उस विषय पर आगे कदम बढ़ाएंगे। अभी तो विचार -मंथन की आवश्यकता है, इसलिए हमारी वर्तमान संविधान सभा सिर्फ सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक, धार्मिक, संवैधानिक सब प्रकार के विषयों पर विचार मंथन तक केंद्रित है। आगे संविधान सभा विचार करेगी कि हमें किस दिशा में सक्रिय होना है। इसलिए मैं आपका भ्रम दूर कर देना चाहता हूं कि हमारी संविधान सभा किसी नए संविधान को बनाने अथवा वर्तमान संविधान में बदलाव करने की कोई योजना रख रही है। यह बहुत दूर की बात है। हम प्रारंभ में अपनी आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक चर्चा तक केंद्रित रहेंगे। शेषनाथ त्रिपाठी जी ने पूछा है कि संविधान सभा से क्या लाभ होगा। मैं उनसे जानना चाहता हूं कि संविधान सभा से समाज को क्या नुकसान होगा। जो लोग इससे अच्छा कार्य कर रहे हैं हम उनके साथ देने को तैयार हैं, अन्यथा हम सिर्फ मानसिक व्यायाम कर रहे हैं और इससे समाज को कोई नुकसान नहीं होगा।

मैंने संविधान सभा की आवश्यकता पर एक पोस्ट लिखी थी। रात 8रू00 बजे की चर्चा में हम सब साथियों ने इस समस्या पर गंभीरता से विचार किया। हम लोगों ने यह महसूस किया कि एक ऐसा स्वतंत्र विचारकों का मंच होना चाहिए जिस मंच पर सब प्रकार के लोग स्वतंत्र विचार मंथन कर सकें। सब लोग वहां आए हुए लोगों को अपने विचारों से प्रशिक्षित भी करें और वहां सामूहिक चर्चा में अपना भी प्रशिक्षण प्राप्त करें। इस तरह स्वतंत्र विचारक एक साथ बैठकर सामाजिक समस्याओं पर विचार मंथन करें। यदि किसी विषय पर सर्वसम्मति बन जाती है तब उस विषय पर कभी निष्कर्ष भले ही निकले, अन्यथा निष्कर्ष निकालने की कोई जल्दबाजी नहीं है। हम निष्कर्ष निकालने से बचने की कोशिश करेंगे और किसी विशेष कठिन पद्धति से ही ऐसा कोई निष्कर्ष निकालेंगे जो समाज या राज्य को संविधान सभा का निष्कर्ष घोषित कर सके। यह विचार मंथन न सिर्फ संवैधानिक विषय पर हो, बल्कि सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक सब प्रकार के विषयों पर यह विचारों का आदान-प्रदान होना चाहिए। हम कोई संगठन नहीं बनाएंगे, हम इस संबंध में कोई संस्था भी नहीं बना रहे हैं। हम ऐसे स्वतंत्र विचारकों का एक मंच बना रहे हैं और उस मंच का नाम संविधान सभा रखा जाएगा। संविधान सभा की सदस्यता के लिए हम संविधान सभा की बैठक प्रत्येक 3 महीने में एक बार रखेंगे और उस 3 महीने की बैठक में बैठकर आगे की कार्य प्रणाली तय की जाएगी। इस तरह तीन त्रैमासिक बैठकें होंगी और एक वार्षिक बैठक होगी। विचार मंथन के लिए जो मंच होगा उसकी बैठक प्रतिदिन रात को 8 से 9रू30 बजे तक चर्चा कार्यक्रम के अंतर्गत होगी और इस मंच का भी संचालन संविधान सभा के लोग मिलकर ही करेंगे। हम यह प्रयास करेंगे कि संविधान सभा में 1 वर्ष में लगभग 200 ऐसे स्वतंत्र विचारकों की सदस्यता प्राप्त हो जाए। सदस्यों के लिए हम यह आवश्यक तय करेंगे कि वह वर्ष में कम से कम एक बार त्रैमासिक बैठक में अवश्य शामिल हो, अथवा यदि कोई सदस्य रात्रिकालीन चर्चा में भी वर्ष में 10 बार शामिल हो जाता है तो हम उसे भी सदस्य मान लेंगे। हम यह भी योजना बना रहे हैं कि वार्षिक कार्यक्रम में हम कम से कम 9 ऐसे सक्रिय सदस्यों को सम्मानित करें जिन्हें हम बहुत गंभीर चिंतनशील मानते हैं। एक व्यक्ति को समाज विज्ञानी, चार को समाजशास्त्री और चार को सामाजिक चिंतककृइस तरह हम नौ लोगों का चयन कर सकते हैं। समाज विज्ञानी को हम ₹100000, समाजशास्त्री को ₹40000 और सामाजिक चिंतक को ₹10000 सम्मान राशि भी सभा की ओर से आवंटित करेंगे। वैचारिक धरातल पर सभी सदस्य समान माने जाएंगे चाहे उनकी विचारधारा कुछ भी हो। इस तरह हम एक विश्व स्तरीय नए प्रयास की शुरुआत भारत से कर रहे हैं और इस प्रयास का नाम संविधान सभा रखा गया है। वर्तमान समय में इस प्रकार के करीब 30-40 लोगों के नाम आ चुके हैं और धीरे-धीरे ऐसे नाम और इकट्ठे हो जाएंगे। हमें उम्मीद है कि अब 1 वर्ष में ऐसे 200 स्वतंत्र विचारकों का विश्वसनीय ग्रुप तैयार कर सकेंगे जो अपने-अपने विचार रखने के लिए स्वतंत्र होंगे और सामूहिक रूप से सबको प्रशिक्षित करेंगे और स्वयं सबके साथ मिलकर प्रशिक्षित होंगे। आप इस संबंध में और भी जानकारी दे सकते हैं या ले सकते हैं।

हम वर्तमान समय में नरेंद्र मोदी-मोहन भागवत की सरकार के पूरी तरह पक्षधर हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि हम इस सरकार का पूरा समर्थन करते हैं। इसका मतलब यह है कि हम वर्तमान समय में तीन को सबसे ज्यादा खतरनाक समझते हैंकृपहला नेहरू परिवार। यदि नेहरू परिवार राजनीतिक सत्ता से 10 वर्षों के लिए संन्यास की घोषणा कर दे तो हम इस लड़ाई को छोड़ देंगे। दूसरा है साम्यवादी विचारधारा। हमें उन लोगों से दिक्कत है जो पूरी तरह अंध साम्यवादी हैं, हम साम्यवादी विचारधारा को घातक मानते हैं, कम्युनिस्ट को नहीं। हमें तीसरी नफरत है इस्लामी संगठन शक्ति से। हम मुसलमान के खिलाफ नहीं हैं। हम खिलाफ इस बात के हैं कि जो मुसलमान व्यक्ति के रूप में है वह हमें मान्य है, लेकिन जो मुसलमान संगठन के साथ जुड़े हुए हैं, उन्हें हम विरोधी मानते हैं। यह तीनों जहां एकजुट हैं, उस एकजुट शक्ति के हम विरोधी हैं। न हम कांग्रेस के विरोधी हैं, न मुसलमान के विरोधी हैं, न कम्युनिस्टों के विरोधी हैं। इन तीनों के विरुद्ध हम नरेंद्र मोदी-मोहन भागवत के समर्थक हैं। दूसरी बात यह है कि नरेंद्र मोदी-मोहन भागवत वर्तमान परिस्थितियों में ठीक दिशा में चल रहे हैं। लेकिन हमारा लक्ष्य है लोक स्वराज। जब इन तीन विपक्षियों का खतरा कम हो जाएगा, तब हम लोग स्वराज के लिए नरेंद्र मोदी-मोहन भागवत सरकार पर दबाव डालेंगे और न मानने की स्थिति में हम विरोध भी व्यक्त करेंगे। हमारी तीन ही इच्छाएं हैंकृपहली, हम सरकार से मांग करते हैं कि ग्राम सभाओं को संविधान संशोधन में अधिकार दें अथवा संविधान सभा का कोई प्रस्ताव दें। दूसरी मांग हमारी समाज से है कि समाज नई समाज व्यवस्था में एक सशक्त परिवार व्यवस्था को सक्रिय करें। तीसरी मांग हमारी अपने साथियों से है कि हमारे सब साथी मिलकर एक स्वतंत्र विचार सभा बनाएं जो पूरी तरह से स्वतंत्र विचार मंथन पर केंद्रित हो। इस तरह मैंने आपको पूरी बात साफ कर दी है। न हम आंख बंद करके वर्तमान सरकार के समर्थक हैं, न हम आंख बंद करके वर्तमान समाज व्यवस्था के समर्थक हैं, न हम आंख बंद करके वर्तमान धर्म व्यवस्था के समर्थक हैं। हम तो पूरी तरह आंख खोलकर परिस्थिति अनुसार अपनी प्राथमिकताएं बदलने के लिए तैयार हैं। हम हर समय परिस्थितियों के अनुसार लक्ष्य निर्धारित करेंगे और उस लक्ष्य के अनुसार हम सब आंख बंद करके सक्रिय होकर चलेंगे।

मैंने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का स्वतंत्रता दिवस पर दिया गया भाषण सुना। पूरे भाषण में नरेंद्र मोदी का आत्मविश्वास बहुत मजबूत दिखा। कहीं ऐसा कोई लक्षण नहीं था कि वर्तमान अमेरिका या विश्व की परिस्थितियों से नरेंद्र मोदी ज़रा भी चिंतित थे। उन्होंने प्रसन्नता व्यक्त की कि अब भारत में संघ की विचारधारा विदेशी संस्कृतियों का स्थान ले रही है। उन्होंने भारत के व्यापारियों से भी उम्मीद की कि वे अपनी दुकानों पर स्वदेशी सामान बेचने की घोषणा करें। उन्होंने विदेशों से भारत में प्रवेश करने वाले मुसलमानों के खतरे को भी एक बड़ी समस्या बताया। उन्होंने टैक्स घटाने की घोषणा दिवाली तक करने की संभावना भी व्यक्त की। नरेंद्र मोदी के भाषण से मेरा आत्मविश्वास बढ़ा है। दूसरी ओर, विपक्षी दलों और उनके नेता राहुल गांधी भी देश की एक छवि लगातार प्रस्तुत करते रहे हैं। उन्होंने कहा था कि भारत की अर्थव्यवस्था मृतप्राय हो गई है क्योंकि ट्रंप हमेशा सच ही बोलते हैं। उन्होंने यह भी कहा था कि भारत की जमीन पर चीन ने कब्जा कर लिया है और भारत सैन्य आधार पर चीन के सामने बिल्ली के समान बना हुआ है। उन्होंने यह भी कहा था कि पहलगाम हमले में पाकिस्तान की सेना ने भारतीय सेना को बहुत नुकसान पहुँचाया है। पिछले 10 वर्षों में राहुल गांधी ने नरेंद्र मोदी को लगातार चोर कहकर संबोधित किया। पहले राहुल श्चौकीदार चोर हैश् कहते थे, अब वे कहते हैं कि नरेंद्र मोदी ने वोटों की चोरी करके चुनाव जीता है। आज स्वतंत्रता दिवस पर देश की जनता तय करेगी कि भारत के प्रधानमंत्री और विपक्ष के नेताओं में से कौन कितने प्रतिशत सच बोल रहा है और कौन कितने प्रतिशत झूठ।

ज़ूम चर्चा कार्यक्रम का सारांश

(1) दिनांक 11 8.2025 को आयोजित जूम चर्चा कार्यक्रम में श्संशोधन का अधिकारश् विषय पर चर्चा हुई। चर्चा के दौरान इसके विभिन्न पहलुओं पर बात की गई।

वर्तमान समय में संविधान में संशोधन का अधिकार संसद के पास है या दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि तंत्र के पास है। संविधान निर्माण तक संविधान सभा का अस्तित्व बरकरार था परंतु संविधान लागू होने के बाद उसे भंग कर दिया गया। संविधान समाज और राज्य के बीच द्विपक्षीय समझौते के रूप में है। दुर्भाग्य से तंत्र यानी संसद ने संविधान संशोधन का मनमाना अधिकार अपने पास ले लिया है। यह विकृति साम्यवाद की नकल है जिसमें राज्य ही सब कुछ होता है।

सैद्धांतिक रूप से यह माना जाता है कि तंत्र संविधान के अनुसार चलना चाहिए परंतु आज स्थिति है कि तंत्र ही संविधान को नियंत्रित कर रहा है। यह विकृति राजनीतिक तानाशाही को जन्म दे रहा है।

लोकतांत्रिक व्यवस्था में संविधान का शासन होता है न कि शासन का संविधान। दुर्भाग्य से यह हो रहा है कि शासन मनमाने तरीके से संविधान में संशोधन कर रही है।

राज्य के अधिकतम तथा समाज के न्यूनतम अधिकारों की सीमाएं निश्चित करने वाले दस्तावेज को संविधान कहते हैं। आज स्थिति यह है कि तंत्र संविधान में मनमाना संशोधन कर संविधान को गुलाम बना लिया है वहीं दूसरी ओर जनता के बीच उसी संविधान को धर्म ग्रंथ का दर्जा देकर पूजने को भी कह रहा है।

यह अत्यंत दुर्भाग्य का विषय है कि अब तक संविधान में जितने भी संशोधन हुए हैं आम जनता के लिहाज से अनुपयोगी है। हमारे राजनेताओं ने अपनी राजनीतिक रोटियां सेकने के लिए संविधान में संशोधन किए हैं।

चर्चा सार्थक एवं उद्देश्य पूर्ण रही जिसमें विचारकों ने अपनी बात रखी। चर्चा के फल स्वरुप अपनी संविधान के प्रति नए दृष्टिकोण और चेतना का जन्म हुआ।

(2) दिनांक 13 8 2025 को आयोजित जूम चर्चा कार्यक्रम में श्संविधान के दूरगामी दुष्परिणामश् पर चर्चा हुई। चर्चा के अंतर्गत इसके विभिन्न पहलुओं पर बात की गई।

वर्तमान संविधान की विकृति के कारण कुछ दुष्परिणाम सामने आए हैं। सबसे बड़ी समस्या यह हुई है कि एक ऐसा तंत्र विकसित हो गया है जिसमें धूर्त, धनी, बुद्धिजीवी और राजनेता शरीफों के खिलाफ है। यह एक षड्यंत्र है जो आजादी के बाद से निरंतर चल रहा है। इसके अलावा समाज में बढ़ता वर्ग संघर्ष इसी संविधान का परिणाम है। हर अव्यवस्था के लिए समाज को दोषी ठहराना आम बात हो गई है। एक तरफ तो राज्य ने समाज को लगभग पंगु बना दिया है और दूसरी और सारा दोष समाज पर ही मढ दिया गया है। समाज का नैतिक पतन भी इसी व्यवस्था की देन है।

वर्तमान व्यवस्था की एक बहुत बड़ी समस्या है अल्पसंख्यकों को विस्तारित विशेषाधिकार। इसी विशेष अधिकार के कारण यहां का बहुसंख्यक समाज लगातार हाशिए पर रहा है।

हमारी कानून व्यवस्था की एक बहुत बड़ी खामी यह है कि अनैतिक और अपराध में भेद नहीं किया गया है। अपराध वह कर्म है जिसमें किसी के मौलिक अधिकारों का हनन होता हो। दूसरी ओर अनैतिक उस कर्म को कहते हैं जिसमें सामाजिक या नैतिक नियमों का उल्लंघन हो। दुर्भाग्य से अनैतिक या असामाजिक कार्य को भी अपराध की श्रेणी में डाल दिया गया है। इसके फल स्वरुप कानून का मकड़जाल पैदा हो गया है जो न्यायिक व्यवस्था को पंगु बना रहा है।

तंत्र ने संविधान को भगवान और धर्म ग्रंथ का दर्जा दे दिया वहीं दूसरी ओर उसको गुलाम बना लिया। भारतीय संविधान को यहां के राज्यतंत्र ने अपने हितों के लिए हमेशा दुरुपयोग किया है। यहां पर शायद ही ऐसा कोई कानून या कार्य किया गया हो जो जनता के लिए है।

चर्चा सार्थक एवं उद्देश्य पूर्ण रही जिसमें वक्ताओं ने अपने विचार रखे। चर्चा के फल स्वरुप वर्तमान व्यवस्था की विकृति और संविधान की कमजोरी के प्रति जागरूकता पैदा हुई।

लोकतांत्रिक संतुलन और न्यायिक हस्तक्षेप: पानीपत का मामला

पानीपत जिले के बुवाना लाखू गांव की पंचायत चुनाव प्रक्रिया इन दिनों चर्चा में है। इसमें अलग-अलग वार्डों की मतगणना की गई, और प्रेसिडिंग ऑफिसर ने दो प्रमुख प्रत्याशियों, कुलदीप और मोहित, में से कुलदीप को विजेता घोषित करते हुए प्रमाण पत्र जारी कर दिया। प्रमाण पत्र जारी होने के बाद मोहित कुमार ने वार्ड संख्या 69 की वोटों की संख्या में बदलाव की बात प्रेसिडिंग ऑफिसर को बताई। प्रेसिडिंग ऑफिसर ने इस पर दोबारा मतगणना करवाई और मोहित को 51 वोटों से विजेता घोषित कर नया प्रमाण पत्र जारी किया।

मामला यहीं खत्म नहीं हुआ। वह हारा हुआ प्रत्याशी हाईकोर्ट गया और यह तर्क दिया कि प्रमाण पत्र जारी होने के बाद प्रेसिडिंग ऑफिसर का अधिकार समाप्त हो जाता है, इसलिए री-काउंटिंग केवल ट्रिब्यूनल के आदेश से ही हो सकती है। इस आधार पर हाईकोर्ट ने पहले जारी प्रमाण पत्र को मान्यता देते हुए कुलदीप को विजेता घोषित कर री-काउंटिंग की प्रक्रिया रोक दी।

मोहित कुमार ने चुनाव आयोग के समक्ष री-काउंटिंग के लिए आवेदन किया, लेकिन न्यायिक बाध्यताओं के कारण चुनाव आयोग ने अनुमति नहीं दी। मजबूर होकर मोहित कुमार सुप्रीम कोर्ट पहुंचे, जहां सुप्रीम कोर्ट ने एक ओएसडी नियुक्त किया और न्यायिक निगरानी में पुनः मतगणना करवा कर अंतिम परिणाम घोषित किया। इसके साथ ही इस विवाद का अंत हुआ।

मेरी दृष्टि में इसे न्यायिक सक्रियता (ज्यूडिशल एक्टिविज्म) या न्यायिक तानाशाही कहें, दोनों में अंतर नहीं है। इस विवाद में असली विजेता मोहित कुमार को न्याय मिलने में ढाई साल और लाखों रुपए खर्च करने पड़े। इस दौरान पंचायत में वह व्यक्ति सरपंच बना रहा, जिसे वैध जनमत नहीं मिला। समय और धन की इस बर्बादी के बावजूद हाईकोर्ट का निर्णय यह दिखाता है कि वर्तमान लोकतंत्र न्यायपालिका की वजह से प्रभावित हो रहा है।

यदि हाईकोर्ट ने समय रहते री-काउंटिंग की अनुमति दे दी होती तो यह मामला सुप्रीम कोर्ट तक नहीं पहुंचता। और यदि सुप्रीम कोर्ट इस मामले में नहीं आता तो एक और संवैधानिक संस्था की शक्तियां कम नहीं होतीं। कांग्रेस के शहजादे राहुल गांधी द्वारा चुनाव आयोग पर लगाए गए आरोपों ने सुप्रीम कोर्ट को इस मामले में हस्तक्षेप करने का नैतिक अवसर दिया। कांग्रेस सत्ता में रहते हुए और अब बाहर रहते हुए भी संवैधानिक संस्थाओं को कमजोर करने का प्रयास करती रही है। भारतीय गणतंत्र को कमजोर करने की कोशिश केवल बाहरी ताकतें ही नहीं कर रही हैं, बल्कि कुछ आंतरिक तत्व भी हैं, जिनका लोकतांत्रिक व्यवस्था को कमजोर करने में समान योगदान है।

ऐसे समय में जब न्यायपालिका राष्ट्रपति को आदेश देने, विधायिका को नकारने, आर्थिक भ्रष्टाचार और पक्षपात के आरोपों से जूझ रही है। तब न्यायपालिका को ऐसे अतिक्रमणकारी आदेश और पूरी विधायिका (पक्ष विपक्ष सहित) को बहुत गंभीरतापूर्वक मुद्दे उठाने चाहिए। हर संवैधानिक संस्था की अपनी भूमिका है उसे भूमिका में अतिक्रमण लोकतांत्रिक संतुलन को बिगाड़ देती है। 1951 में न्यायपालिका के अधिकारों को सीमित कर 9वीं अनुसूची बनाने से लेकर 1973में संविधान संशोधन में राष्ट्रपति की भूमिका को कमजोर करने से लेकर विधायिका और न्यायपालिका दोनों ही बराबर के दोषी हैं।

बड़ा सवाल यह है कि इस असंतुलन को ठीक कैसे किया जाय?

ज्ञानेंद्र आर्य